चौदह गुणस्थान चर्चाकोष



संग्रहकर्ता—

पूज्य श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज

❋ श्रीवीतरागायनमः ❋

चौदह गुणस्थान चर्चाकोष

संग्रहकर्ता—

पूज्य श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज

प्रकाशक—

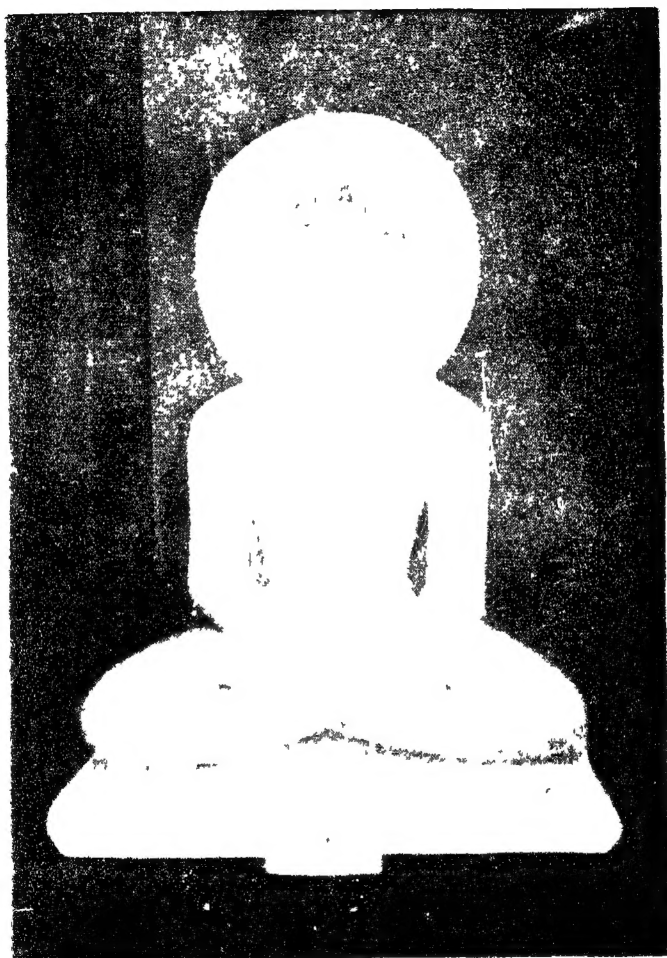
जैन मित्र मण्डल, धर्मपुरा, दिल्ली।

प्रथम संस्करण } भाद्रपद वदी २ वीर सं० २४८४ वि० सं० २०१४ दिनांक १२-८-५७ { मूल्य एक रुपया

प्रकाशक—
जैन मित्र मण्डल
धर्मपुरा, देहली।



मुद्रक—
सन्मति प्रेस,
२३० गली कुञ्जस,
दरीबा कलाँ, देहली।



अहिंसा के अवतार श्री १००८ भगवान महावीर

वक्तव्य

प्रस्तुत ग्रन्थ अनेक प्रकार की चर्चाओ का एक सुगम कोष है। इस कोष मे किसी एक ही अनुयोग की चर्चा नही है अपितु चारो अनुयोगो की जानने योग्य बाते सरल सुबोध हिन्दी भाषा मे इस ग्रन्थ में दी हैं। प्रस्तुत पुस्तक समग्र ग्रन्थका लगभग तृतीयाश है। अवशिष्ट अश लगभग दो भागो में और प्रकाशित होगा।

यह उपयोगी ग्रन्थ विहार काल में पूज्य आचार्य श्री १०८ देशभूषण जी महाराज को फर्रुखनगर (जिला गुडगावाँ) के मदिर जी के शास्त्र भडार में उपलब्ध हुआ। फर्रुखनगर के शास्त्र भडार में प्राचीन ग्रन्थोका अपूर्व सग्रह है, और यहाँ विशाल भव्य मूर्ति विराजमान है। ग्रन्थ की उपयोगिता देखकर उन्होने इसके प्रकाशन का आयोजन कराया। श्री ब्र० उल्फतराय जी रोहतक तथा श्री ब्र० शीलचन्द जी फिरोजपुर झिरकाने ग्रन्थ की प्रतिलिपि की है। उनका यह परिश्रम प्रशंसनीय है।

जैन सिद्धान्तो के जिज्ञासुओ तथा सैद्धान्तिक चर्चा-प्रेमियो के लिए यह ग्रथ बहुत उपयोगी प्रमाणित होगा। गोमट्टसार, त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति, आचारसार पुरुषार्थसिद्धयुपाय, समयसार आदि अनेक ग्रथो से ज्ञातव्यसिद्धान्तो का सार खीचकर इस ग्रंथका निर्माण हुआ है। अत स्वाध्यायप्रेमियो को यह पुस्तक बहुत काम देगी।

पूज्य आचार्य श्री देशभूषणजी महाराज जिनवाणी के उद्धार तथा प्रचार में जो चिरस्मरणीय ठोस कार्य कर रहे हैं, उसमे एक यह ग्रथ भी सम्मिलित हुआ है।

ग्रन्थकर्ता का नाम अज्ञात है उस अज्ञात ग्रन्थरचयिता का श्रम महान प्रशंसनीय है।

आवेदक—

सुल्तानसिंह जैन,

दिल्ली

धन्यवाद

इन दोनो दानी महानुभावो ने ही इस ग्रथ के पूर्ण कराने में सहायता दी है इसके लिये कोटिश धन्यवाद।

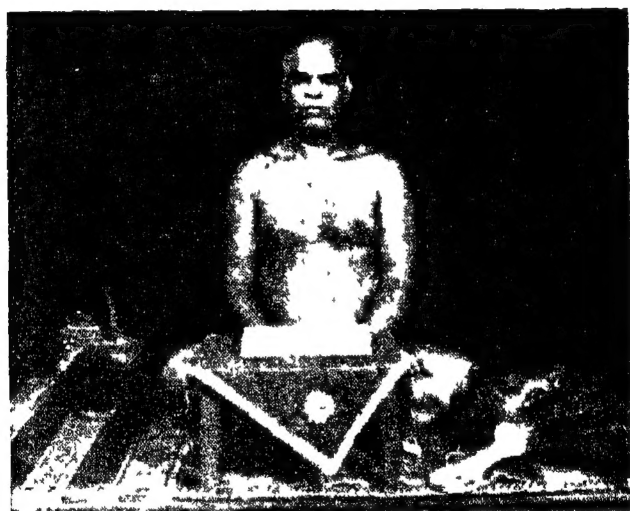
१५०) श्री ला० सुमतप्रसाद जैन सुपुत्र ला० मामचन्दजी जैन सर्राफ
फरुखनगर, (गुडगांवा)।

१३०) श्री विद्यादेवी धर्मपत्नी ला० शम्भूनाथजी कागजी
चावडी बाजार, देहली।

कागज के लिये सहायता देने वालो के नाम—

डा० ईश्वरदयाल जी, ला० सुजानसिंह जी, ला० देवेन्द्रकुमार जी, ला०शान्ति आनन्दजी, ला० जयन्तीप्रसादजी पसारी, बा० नानकचन्दजी, ला० सुमतप्रसादजी, बा० इन्द्रसेनजी एडवोकेट, बा० लालचन्दजी एडवोकेट, ला० फतहचन्दजी, श्रीमती सन्नोदेवीजी, मास्टर रघुवीरसिंह श्रीमती श्रीमतीदेवी अध्यापिका, ला० नोरंगलालजी, ला० जैचन्दरायजी, ला० अनूपसिंह सीतारामजी, ला० चन्द्रसेनजी, ला० पदमसेनजी नाजर ला० रघुनाथसहाय अभयरामजी, ला० बसन्तलालजी, ला० ताराचन्द जी सर्राफ।

—प्रकाशक



परम पूज्य श्री १०८ आचार्य देशभूषण जी महाराज

❀ श्रीवीतरागायनमः ❀

श्रीचौदह गुणस्थान चर्चाकोष

संग्रहकर्ता—

पूज्य श्री १०८ आचार्य देशभूषणजी महाराज

❀ मंगलाचरण ❀

दोहा—धर्म धुरंधर आदि जिन, आदि धर्म करतार ।
मैं नमहूँ अघहरण तैं, सब विधि मगल सार ॥१॥
अजित आदि पारस प्रभु, जयवन्ते जिनराय ।
घाति चतुष्टय कर्म मल, पीछे भये शिवराय ॥२॥
वर्धमान वरतो सदा, जिन शासन सुधसार ।
यह उपगार तुम तणों, मैं पाये सुखकार ॥३॥
सिद्ध बुद्ध वन्दूं सुबुध, आनन्द रूप अपार ।
ज्ञान ज्योति प्रज्वलित अचल, चैतन्य धातु अविकार ॥४॥
जिन मुखतैं उत्पन्न भई, स्याद्वाद सुख दैन ।
आनन्द धार अमोघ रस, भवि जीवन सुख चैन ॥५॥
ज्ञानी ध्यानी नग्न मुनि, ध्यावे निज शिव रूप ।
हँस वश उज्ज्वल करे, आनन्द रस भय कूप ॥६॥
जिन शासन वरतो सदा, आनन्द रस अपार ।
दया सुधा बहता ललित, भवि जीवन सुखकार ॥७॥
मगल करण, अघहरण, इहै जिनके सब नाम ।
निश वासर सुमरू सदा, सरैं सगरे निज काम ॥८॥

चौबीस ठाणा यंत्र (कोष्ठक)

नं०	नाम—	विशेष भेद
१	गति ४	देव, मनुष्य, तिर्यंच, नरक।
२	इन्द्रिय ५	स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र।
३	काय ६	पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजकाय, वायुकाय, बनस्पतिकाय, त्रसकाय।
४	योग १५	सत मनोयोग, असत मनोयोग, उभय मनोयोग, अनुभय मनोयोग, सतवचन योग, असतवचन, उभयवचनयोग, अनुभय वचनयोग, औदारिक काय योग, औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रियक-काययोग, वैक्रियक मिश्रकाय योग, आहारककाय योग, आहारक मिश्रकाय योग, कार्माणकाययोग
५	वेद ३	स्त्री वेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद
६	कषाय २५	अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ, सज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ, नौ कषाय—हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद
७	ज्ञान ८	कुमति, कुश्रुति, कुअवधि, मति, श्रुति, अवधि, मनपर्यय, केवल।

नं०	नाम—	विशेष भेद
८	संयम ७	असंयम, संयमासंयम, सामायक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात ।
९	दर्शन ४	चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन।
१०	लेश्या ६	कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पदम, शुक्ल।
११	भव्य २	भव्य, अभव्य ।
१२	सम्यक्त्व ६	मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, उपशम, क्षयोपसम, क्षायक ।
१३	सञ्ज्ञी २	सञ्ज्ञी, असञ्ज्ञी ।
१४	अहारक २	अहारक, अनाहारक ।
१५	गुणस्थान १४	मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र, अवृत्त सम्यग्दृष्टि, देशव्रत, प्रमत्त अप्रमत्त, अपूर्वकरण, अनिवृत्ति करण, सूक्ष्म सांपराय, उपशांत मोह. क्षीणमोह, सहयोग केवली, अयोग केवली ।
१६	जीवसमास १६	पृथ्वी काय के सूक्ष्म वादर २ भेद जल काय के सूक्ष्म वादर दो भेद अग्नि काय के सूक्ष्म वादर दो भेद वायु काय के सूक्ष्म वादर दो भेद नित्य निगोद सूक्ष्म वादर दो भेद

न० नाम विशेष भेद

इतर निगोद सूक्ष्म बादर दो भेद

सप्रतिष्ठित प्रयेत्क, अप्रतिष्ठित प्रत्येक.

बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चौइन्द्रिय, असैनी पंचेन्द्रिय, सैनी पचेंद्रिय

१७ पर्याप्ति ६—आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोश्वास भाषा, मन—

१८ प्राण १०—इन्द्रिय पांच, मनोबल एक, वचनवल एक, कायबल एक, श्वासोश्वास एक, आयु एक

१९ सज्ञा ४— आहार, भय, मैथुन, परिग्रह ।

२० उपयोग १२—ज्ञान के आठ, दर्शन के चार,

(भेद ऊपर आ चुके हैं)

२१ ध्यान १६

आर्तध्यान ४	रौद्रध्यान ४
१ इष्टवियोगज १	हिंसानद १
२ अनिष्टसंयोगज १	मृषानन्द १
३ पीड़ाचिंतन,	३ चौर्यानन्द
४ निदानबंध,	४ परिग्रहानद

धर्मध्यान ४	शुक्ल ध्यान ४
१ आज्ञाविचय	१ प्रपृक्त्ववितर्क
२ अपायविचय	२ एकत्ववितर्क
३ विपाकविचय	३ सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति
४ संस्थानविचय	४ व्युपरतक्रियानिवृत्ति

नं० नाम विशेषभेद

२२ आश्रव ५७ मिथ्यात्व ५ अवृत्त १२

१ एकान्तमिथ्यात्व—षट् काय रक्षा नहीं ६

२ विनयमिथ्यात्व—पाँच इंद्रियवश नहीं ५

३ विपरीत मिथ्यात्व—एक मन वश नहीं १

४ संशयमिथ्यात्व—कषाय पूर्वोक्त २५

५ अज्ञानमिथ्यात्व—योग पूर्वोक्त १२

२३ योनि (जाति) ७ लाख पृथ्वी काय २ लाख दो इन्द्रिय

८४ लाख ७ लाख जल काय २ लाख तीन इन्द्रिय

७ " अग्नि काय २ " चौ इन्द्रिय

७ " वायु काय

७ " नित्य निगोद ४ " पशु

७ " इतर निगोद ४ " नारक

१० " वनस्पति ४ " देव

१४ " मनुष्य

जोड़ ८४ लाख

२४ कुल १६७॥ लाख करोड़

२२ लाख करोड़ पृथ्वी काय

७ लाख करोड़ जल काय

३ लाख करोड़ अग्नि काय

७ लाख करोड़ वायु काय

२८ लाख करोड़ वनस्पति काय

नं०	नाम	विशेष भेद	
		७ लाख करोड़	दो इन्द्रिय
		८ लाख करोड़	तीन इन्द्रिय
		६ लाख करोड़	चार इन्द्रिय
		४३॥ लाख करोड़	पचेन्द्रिय तिर्यंच
		१२॥ लाख करोड़	जलचर
		६ लाख करोड़	श्रीसपे (सीसृप)
		१० लाख करोड़	अन्य थलचर
		१२ लाख करोड़	नभचर
		जोड़ ४३॥ लाख करोड़	
		२५ लाख करोड़	नारक
		२६ लाख करोड़	देव
		१२ लाख करोड़	मानुष
		कुल जोड़ १६७॥ लाख करोड़	

चर्चा नं० २ खरीजवार विषयों का कोष्ठक

विषय नाम	विशेष व्याख्या

द्रव्य ६—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल।

पदार्थ ६—जीवतत्व, अजीवतत्व, आस्रवतत्व, बंधतत्व, संवरतत्व निर्जरातत्व, मोक्षतत्व, पुण्यतत्व, पापतत्व।

नाम विषय विशेष व्याख्या

प्रतिमा, ११—दर्शन, व्रत, सामायिक, प्रोषधोपवास, सचित्त त्याग, रात्रि भुक्ति त्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भ त्याग, परिग्रहत्याग, अनुमतित्याग, उद्दष्टत्याग ।

व्रत १२—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्म चर्य, परिग्रहत्याग, दिग्व्रत, देशव्रत, अनर्थदण्डव्रत, सामायिक, प्रोषधोपवास, भोगोपभोग परिमाण, अतिथिसंविभाग ।

अणुव्रत ५ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रह परिमाण ।

अनुप्रेक्षा १२ अध्रुव, अशरण, जगत, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्त, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक, धर्म, बोधदुर्लभ

भावना ४ मैत्री, प्रमोद, कारुण्य, माध्यस्थ्य ।

तप १२ अनशन, अवमोदर्य व्रतपरिसंख्यान, रसपरित्याग । विभक्तशैयासन, कायक्लेश ।

(अंतरंग ६) प्रायश्चित, विनय, वैयाव्रत, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग ध्यान ।

मूलभाव ५ औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक, पारणामिक

चर्चा नं० ३, ५ मूल भाव के उत्तर

(५३ भाव का कोष्ठक)

औदयिक भाव २१ गति ४, कषाय ४, लिंग ३, लेश्या ६, मिथ्यादर्शन १, अज्ञान १ असयत १, असिद्ध १,

उपशम भाव २—सम्यक्त्व चरित्र ।

क्षायिक भाव ९ सम्यक्त्व, चारित्र, ज्ञान, दर्शन, दान, लाभ
भोग उपभोग, वीर्य ।

क्षयोपशम भाव १८—(ज्ञान) कुमति, कुश्रुति, कुअवधि, मति, श्रुति,
अवधि, मनःपर्यय (दर्शन) चक्षु, अचक्षु, अवधि
(लब्धि) दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य
(अन्य) सम्यक्त्व, संजमासंजम, सरागसंजम

पारिणामिक भाव ३—जीवत्व भव्यत्व, अभव्यत्व.

चर्चा नं० ४ खरीजवार विषयों का कोष्ठक

नय ७—नैगमसंग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ़, एवंभूत
निक्षेप ४—नाम, स्थापन, द्रव्य, भाव.

द्रव्य के सामान्यगुण १०—अस्तित्व, वस्तुत्व, प्रमेयत्व, अप्रमेयत्व,
प्रदेशत्व, अगुरुलघुत्व, चेतनत्व, अचेतनत्व
अमूतत्व, मूर्तत्व,

नोट—इन विषय ६ द्रव्यों में से हरेक द्रव्य
में आठ गुण जरूर पाये जाते हैं

द्रव्य के विशेष गुण १६—ज्ञान १, दर्शन. १, सुख १, वीर्य १,
स्पर्श १, रस १, गंध १, वर्ण १, गतिहेतु-
त्वव १, स्थितिहेतुत्व १ अवगाहनहेतुत्व १,
वर्तनाहेतुत्व १, चेतनत्व १, अचेतनत्व,
मूर्तत्व, अमूर्तत्व

नोट—इनमें जीव के या पुद्गल के ६ गुण हैं
धर्मादिक के तीन तीन गुण हैं ।

चर्चा नं० ५ त्रक कोष्ठक

(इसमें समवायोग चौथे अंगके आधारभूत तीन तीन के कुछ स्थानों का वर्णन है)

विषय नाम	विशेष व्याख्या
(१) तीन	ध्याता, ध्येय, ध्यान
(२) तीन	ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान
(३) तीन	उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य
(४) तीन	ज्ञेय, हेय, उपादेय
(५) तीन	द्रव्य, गुण, पर्याय
(६) तीन	कर्ता, कर्म, कारण
(७) तीन	कर्ता, कर्म, क्रिया
(८) तीन	अतीत, अनागत, वर्तमान
(९) तीन	भूत, भविष्यत, वर्तमान
(१०) तीन	आदि, मध्य, अन्त
(११) तीन	अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक
(१२) तीन	संशय, विमोह, विभ्रम
(१३) तीन	सशय, अनध्वसाय, विभ्रम
(१४) तीन	अतिव्याप्ति, अव्याप्ति, असंभव

चर्चा नं० ६ द्विक कोष्ठक १२

विषय नाम	विशेष व्याख्या
(१) दो	सामान्य, विशेष
(२) दो	निश्चय, व्यवहार
(३) दो	निमित्त, उपादान
(४) दो	निमित्त, नैमित्तिक
(५) दो	आधार, आधेय
(६) दो	कर्ता, कर्म
(७) दो	कर्ता, भोक्ता
(८) दो	ज्ञेय, ज्ञायक
(९) दो	स्व, स्वामी
(१०) दो	प्रकाश, प्रकाशक
(११) दो	वेद, वेदक
(१२) दो	चेत, अचेत

चर्चा नं०७ पंच परमेष्ठी के १४३ गुण

अर्हंत के ४६ गुण— जन्म के १०—

पसेव नहीं, मल नहीं, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभ नाराच संहनन, सुगंध शरीर, मधुर वचन, श्वेत रुधिर, १००८ शुभ लक्षण, सुन्दर रूप, अनन्त बल,

केवलज्ञान, पीछे दस —

सौ सौ योजन चारो तरफ सुभिक्ष, आकाशगमन, अदया का अभाव, उपसर्ग नहीं, कवलाहार नहीं, चार मुख चारों तरफ दीखे, सर्वविद्याओं के ईश्वर छाया नहीं, केश नख बढ़ें नहीं, आँख भौं का टिमकार नहीं ।

देवकृत १४ अतिशय

अर्धमागधी भाषा, सकल जीवों में मैत्री भाव, सर्व ऋतु के फल फूल फल जावें, दर्पण के समान भूमि, मन्द मन्द सुगन्ध पवन, सर्व जीवों के आनन्द कंटक रहित भूमि, गधोदक वृष्टि, पाद युगल नीचे २२५ कमल, आकाश निर्मल, देवों का जयकार शब्द, धर्म चक्र, आठ मगल द्रव्य ।

४ अनन्त चतुष्टय—

अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य ।

आठ प्रातिहार्य:—

सिंहासन, दिव्यध्वनि, प्रभामण्डल, चॅवर, छत्र, अशोक वृक्ष, पुष्पवृष्टि, दुन्दुभि नाद ।

अष्ट मङ्गल द्रव्य की विशेष व्याख्या—

चॅवर, छत्र, कलश, झारी, स्वस्तिक, दर्पण, ध्वजा, बीजणा ।

सिद्धों के आठ गुण—सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघु, अव्याबाध।

आचार्य के ३६ गुण—गुप्ति ३, समिति ५, धर्म १०, तप १२, षट् आवश्यक।

उपाध्याय के २५ गुण—११ अंग १४ पूर्व।

साधु के २८ मूलगुण—महाव्रत ५, समिति ५, इंद्रिय विजय ५, आवश्यक ६, भूमिशयन १, स्नान त्याग १, वस्त्ररहित १, केशलौंच १, एक बार लघु भोजन १ खड़े होकर आहार लेना १, दन्तधावन नहीं करना १

चर्चा नं० ८ खरीज वार विषय कोष्ठक

दोष १८—क्षुधा, तृषा, राग, द्वेष, मोह, जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, भय, विस्मय, निद्रा, खेद, स्वेद, मद, अरति, चिंता।

महाव्रत ५ अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, आकिंचन्य।

समिति ५ ईर्या, भाषा, ऐषणा, आदाननिक्षेपण, प्रस्थापना।

आवश्यक, ६ (मुनियों के) समता, वंदना, स्तुति करना, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय अथवा प्रत्याख्यान, कायोत्सर्ग।

आवश्यक ६ (श्रावकों के) देवपूजा, गुरूपूजा, स्वाध्याय, संयम, तप, अतिथि संविभाग।

धर्म १०—उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य।

षोडस कारण भावना १६—दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेषु अनतिचार, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधु समाधि, वैयाव्रतकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यका परिहाणि मार्ग प्रभावना, प्रवचन, वात्सल्य

नियम १७—भोजन, षट् रस पान अरगजा, फूल, तांबुल, गीत, नृत्य, आदिक, ब्रह्मचर्य, स्नान, आभूषण, वस्त्रादिक, वाहन, सज्या, आसन, सचित्त, वस्तुसंख्या

परिषह बाईस २२—(ज्ञानावरणी के उदय से दो)–प्रज्ञा, अज्ञान
(दर्शन मोह के उदय से एक) अदर्शन।
(चरित्र मोह के उदय से सात)–नग्नत्व, अरति स्त्री, निषिध्या, आक्रोष, याचना, सत्कार, पुरस्कार,
(अंतराय के उदय से १) अलाभ।
(वेदनीय के उदय से ११) क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमसक, चर्या सज्जा, बध, रोग, तृणस्पर्श, मैल।

नवधा भक्ति के नाम—प्रतिग्रहण, ऊँचा स्थान, पादोदक, अर्चन, प्रणाम, मनबचन काय विशुद्धि, भोजनविशुद्धि
नोट—मुनि महाराज के लिये कमंडल पीछी देना, अर्जिकाजी के लिए कमंडल पीछी देना वस्त्रादिक देना, अन्य त्यागियो को यथायोग्य वस्तुयें देना इसी में सम्मिलित है।)

दत्ति चार प्रकार—समदत्ति, दयादत्ति, पात्रदत्ति, सर्वदत्ति ।

दातार के गुण ७—इस लोक के फल की वांछा नहीं, क्षमावान, कपटरहित, अदेखस का भाव नहीं, विषाद नहीं हर्षवान हो, अहंकार रहित ।

आचरण ५—दर्शन ज्ञान, चारित्र, तप, वीर्य ।

आराधना ४—दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप ।

प्रमाण १६—(क) प्रमाण के उन्नीस भेद इस प्रकार हैं:—

अवसन्नासन्न १, सन्नासन्न १, तटरेणु ३, त्रसरेणु ४, रथरेणु ५, उत्तम भोग भूमियाँ भेड़ के बाल का अग्र भाग, मध्यम भोग भूमियाँ मेढ़ें के बाल का अग्रभाग, जघन्य भोगभूमियाँ मेढ़ें के बाल का अग्र भाग, कर्म भूमियाँ के भेड़ के बाल का अग्रभाग, लीक, सरसों, जौ उच्छेदांगुल

नोट—पहले भेद अवसनासन में पुद्गल के अनन्त परमाणु होते है इससे आगे बारहवें भेद तक सब स्थान पहले स्थान से आठगुणे आठगुणे रूप बढ़ते चले जाते है

(ख) उच्छेदांगुल से पाँच सौ गुणा प्रमाण अंगुल होता है ।

(ग) प्रमाणांगुल से चौबीस गुणा हाथ होता है ।

(घ) चार हाथ का एक धनुष होता है ।

(ङ) दो हजार धनुष का एक कोस होता है ।

(च) चार कोस का एक योजन होता है।

(छ) सख्यात योजन का एक राजू होता है।

चर्चा नं० १०

(जीव समास एक से ४०६ तक सख्यात, असख्यात, अनन, भेद वर्णन इस प्रकार है।)

नोट—यह वर्णन ठाणाग नाम के तीसरे अंग के आधार पर किया गया है।

जीव समास भेद संख्या १—चेतना गुणधारी जीव (यह चेतना-गुण जीव की सिद्ध व ससारी हर अवस्था में होता है)।

सामान्य भेद सख्या २—सिद्ध और संसारी (सिद्ध जीवों में कोई भेद नहीं होता है)।

जीव अपेक्षा—अब जो आगे भेद चलेगे वे ससारी जीव की अपेक्षा होंगे।

ससारी जीव अपेक्षा भेद २—स्थावर, त्रस।

३—एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, पचेन्द्रिय।

४—देव, नारकी, मनुष्य, तिर्यच।

५—एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय तीनेन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पचेन्द्रिय।

६—(स्थावर) पृथ्वीकाय जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय ये पाच तथा त्रस

कुल छः हुये।

७—स्थावर ५, विकलत्रय १, पंचेन्द्रिय १।

८—स्थावर ५, विकलत्रय १, असैनी पंचेन्द्रिय १, सैनी पचेन्द्रिय १।

९—स्थावर ५, विकलत्रय ३, पंचेन्द्रिय १।

१०—स्थावर ५, विकलत्रय ३, पचेन्द्रिय २।

११—स्थावर सूक्ष्म ५, स्थावर वादर ५, त्रस १

१२—स्थावर १०, विकलत्रय १ पंचेन्द्रिय १।

१३—स्थावर १०, विकलत्रय १, पचेन्द्रिय २।

१४—स्थावर १०, विकलत्रय ३, पचेन्द्रिय १।

१५—स्थावर १०, विकलत्रय ३, पचेन्द्रिय २।

१६—स्थावर १०, प्रत्येक वनस्पति १, विकलत्रय ३, पंचेन्द्रिय २।

१७—स्थावर १०, प्रत्येक प्रतिष्ठित १, प्रत्येक अप्रतिष्ठित १, विकलत्रय ३, पंचेन्द्रिय २।

१८—(सूक्ष्म) नित्यनिगोद १, इतरनिगोद १, पृथ्वीकाय १, जलकाय १, अग्निकाय १, वायुकाय १, (वादर) ऊपर वाले ६, प्रत्येक २, विकलत्रय ३, पचेन्द्रिय १; कुल १८ भेद हुये।

१९—ऊपर के १८ भेदो में पचेन्द्रिय १ गिना था यहाँ दो भेद गिनो।

संसारी जीव अपेक्षा भेद संख्या—

भेद ३८— पर्याप्त १९, अपर्याप्त १९ ।

भेद ५७— पर्याप्त १९, अपर्याप्त १९, लब्धिपर्याप्त १९ ।

भेद ९८— (क) देव के पर्याप्त अपर्याप्त दो भेद ।

(ख) नारकी के पर्याप्त अपर्याप्त दो भेद ।

(ग) आर्यखड, अनार्यखड, भोगभूमिया कुभोग भूमिया ये चारों पर्याप्त तथा चारो अपर्याप्त तथा लब्ध अपर्याप्त संमूर्च्छन इस तरह मनुष्य के नौ भेद ।

(घ) जलचर, थलचर, नभचर ये तीनों संज्ञी तथा तीनों असज्ञी फिर दोनो का जोड़ ६ अपर्याप्त पर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त इन तीनों से गुणा करके १८ भेद, ये समूर्च्छन पचेन्द्रिय तिर्यंच के हुये ।

(ङ) जलचर, थलचर, नभचर, ये तीनो संज्ञी तथा तीनों असज्ञी फिर दोनों का जोड़ ६, अपर्याप्त पर्याप्त इस तरह ये बारह भेद, गर्भज पन्चेन्द्रिय, कर्मभूमिया तिर्यंच के हुवे ।

(च) नभचर, थलचर, ये दो पर्याप्त तथा दोनो अपर्याप्त इस तरह चार भेद, भोग भूमिया पंचेन्द्रिय तिर्यंच के हुवे ।

नोट—भोग भूमि में जलचर तथा असञ्ज्ञी तथा स्थावर और विकलत्रय यह जीव नहीं होते है।

(छ) पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, नित्य निगोद, इतर निगोद ये छह सूक्ष्म तथा छहों बादर इस तरह बारह भेद हुवे, इनमें सप्रतिष्ठित प्रत्येक अप्रतिष्ठित प्रत्येक ये दो भेद मिलाकर १४ बन गये तथा दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, ये विकलत्रय मिलाकर १७ भेद बन गये, यह १७ भेद पर्याप्त अपर्याप्त लब्धि अपर्याप्त इन तीन से गुणा करके ५१ भेद हो गये।

नोट—इस तरह देव के भेद २, नारकों के भेद २, मनुष्य के भेद ६, गर्भज तिर्यंच के भेद ३४, एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय तिर्यंच के भेद ५१, सर्व मिलाकर जीव समास के ६८ भेद बन गये।

४०६ (क) भवनवासी १०, व्यन्तर ८, ज्योतिषी ५, कल्पोपपन्न तथा कल्पातीत विमानों के पटल ६३, इस तरह ८६ भेद हुवे। इनको पर्याप्त तथा अपर्याप्त से गुणा करके १७२ भेद बने।

(ख) सात नरकों के पटल ४६ इनको पर्याप्त अपर्याप्त से गुणा करके ९८ भेद हो गये।

(ग) भोग भूमिया मनुष्य के उत्तम, मध्यम, जघन्य, यों तीन भेद तथा कुभोग भूमिया, और म्लेच्छ खण्ड के मनुष्य तथा आर्य-खण्ड, इस तरह सर्व मिलकर ६ भेद हुवे, इनको पर्याप्त अपर्याप्त से गुणा करके १२ भेद बन गये, इनमें सन्मूर्च्छन मनुष्य (जो योनि आदि में रहते हैं) मिलाकर १३ भेद हो गये।

(घ) कठोर पृथ्वी, नर्म पृथ्वी, अपकाय, तेज-काय, वायुकाय, नित्यनिगोद, इतरनिगोद ये सातों सूक्ष्म तथा सातों बादर, इस तरह प्रत्येक वनस्पति के ये १४ भेद बन गये।

(ङ) तृण, बेल, छोटा वृक्ष, बड़ा वृक्ष, मूल, इस तरह ये पाँचों प्रतिष्ठित तथा पाँचों अप्रति-ष्ठित दस भेद हुवे, और विकलत्रय के दो इन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, इस तरह तीन भेद मिलाकर २७ भेद बन गये, इनको पर्याप्त, अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त से गुणा करके ८१ भेद बन गये।

(च) जलचर, थलचर, नभचर, ये तीनों संज्ञी तथा तीनों असज्ञी मिलकर ६ भेद हुवे, इनको पर्याप्त तथा अपर्याप्त से गुणाकर गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंच के १२ भेद बन गये।

(छ) उत्तम, मध्यम, जघन्य भोग भूमिया ये तीनों नभचर, तथा तीनों थलचर, इस तरह ६ भेद हो गये, इनको पर्याप्त तथा अपर्याप्त से गुणा करके १२ भेद भोग भूमिया तिर्यंच के बन गये।

(ज) जलचर, थलचर, नभचर, तीनो संज्ञी, तथा असज्ञी मिलकर ६ भेद बन गये, इन छओं को पर्याप्त अपर्याप्त लब्धि अपर्याप्त से गुणा करके १८ भेद सन्मूर्छन पचेन्द्रिय तिर्यंच के बन गये।

चर्चा नं० ११ खरीजवार विषयों का कोष्टक

सम्यक्त्व के अंग ८—निशाकित, निकाक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढ़दृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य, प्रभावना।

सम्यक् दृष्टि के गुण ८—करुणा, वात्सल्य, सज्जनता, अपनिंदा, समता, भक्ति, वैराग्य, धर्मानुराग।

सम्यक्त्व के २५ दोष—

मद ८— जाति, धन, कुल, रूप, तप, बल, विद्या, सरदारी।

दोष ८— शंका, वांछा, दुर्वाञ्छा, मूढ़दृष्टि, परदोष भाषण, अथिरीकरण, वात्सल्यरहित, प्रभावनारहित

अनायतन ६—कुगुरु, कुदेव, कुधर्म इन तीनों की प्रशंसा करना तथा इन तीनों के भक्तों की प्रशंसा करना इस तरह ६ हुवे।

मूढ़ता ३— कुगुरु, कुदेव, कुधर्म, इन तीनों की पूजा करना।

पांच इन्द्रियों के भेद ३०— द्रव्य इन्द्रिय, निर्वृत्ति, उपकरण, आभ्यन्तर, बाह्य, (भाव इन्द्रिय) लब्धि, उपयोग, इन छहों को पांचों इन्द्रियों से गुणा करने पर ३० भेद बन जाते हैं।

पांच इन्द्रियों के आकार—स्पर्शन इन्द्रिय अनेक प्रकार, रसना इन्द्रिय गाय के खुर समान।

नोट—कहीं खुरपे समान भी लिखा है देख लेना।

घ्राणेन्द्रिय तिल, पुष्प आकार, चक्षु इन्द्रिय मसूर की दाल आकार, श्रोत्र इन्द्रिय जौ की नली के आकार।

पांच इन्द्रियों के विषय वासनाओं की संख्या— स्पर्श ८, रस ५, गंध २, वर्ण ५, सचित्त, अचित्त, मिश्र बाजे के सात स्वर।

पाँचों इन्द्रियों का विषय क्षेत्र कोष्ठक—

	स्पर्शन	रसना	घ्राण	चक्षु	कर्ण
एकेन्द्रिय	४०० धनुष	०	०	०	०
दोइन्द्रिय	८०० धनुष	६४ धनुष	०	०	०
तेइन्द्रिय	१६०० धनुष	१२८ धनुष	१००	०	०
चौइन्द्रिय	३२०० धनुष	२५६ धनुष	२००	२९५४ योजन	०
असैनी पंचेन्द्रिय	६४०० धनुष	५१२ धनुष	४०० धनुष	५९०८ योजन	८००० धनुष
सैनी पंचेन्द्रिय	९ योजन	९ योजन	९ योजन	४७२६३ ७/२० योजन	१२ योजन

नोट—सैनी पंचेन्द्रिय का जो विषय क्षेत्र है वह उत्कृष्ट विषय है, यह विषय चक्रवर्त्ती के ही होता है।

चर्चा नं० १२ खरीजवार विषयों का कोष्टक

छह काय के जीवों की उत्कृष्ट आयु—कठोर पृथ्वी २२ हजार वर्ष, नरम पृथ्वी १२ हजार वर्ष, अपकाय सात हजार वर्ष, तेजकाय तीन दिन, वायु काय तीन हजार वर्ष, वनस्पति दस हजार वर्ष, बे इन्द्रिय बारह वर्ष, तीन इन्द्रिय ४९ दिन, चौ इन्द्रिय छह मास, पचेन्द्रिय ३३ सागर।

छह काय के जीवों की जघन्य आयु—देव की १० हजार वर्ष, नारकी की दस हजार वर्ष, तिर्यंच तथा मनुष्य की एक स्वांस के अठारहवें भाग,

नोट—यह जघन्य स्थिति लब्धि अपर्याप्त की अपेक्षा है।

छह काय के जीवों के आकार—पृथ्वी मसूर के अन्न के आकार, जल बूंद के आकार, अग्नि सुई के अग्र भाग के आकार, वायु ध्वजा के आकार, वनस्पति तथा त्रस के अनेक आकार।

छह काय के चौबीस भेद—पृथ्वी, पृथ्वी काय, पृथ्वी कायक, पृथ्वी जीव, इस तरह ये चार भेद बने, इसी तरह जल, अग्नि, वायु, वनस्पति, त्रस, इन पाचों के भी पृथ्वी की तरह चार चार भेद कर लेना।

नोट—(क) जिस पृथ्वी में अंकुरा उत्पन्न करने की शक्ति नष्ट हो गई हो जैसे जली हुई मिट्टी, उसको अचित्त पृथ्वी कहते हैं।

(ख) जिस मिट्टी (पृथ्वी) में अंकुरा उत्पन्न होने की शक्ति मौजूद हो उसको सचित्त पृथ्वी या पृथ्वीकाय कहते हैं

(ग) उस पृथ्वीकाय में जो जीव आकर ठहरा है उस जीव को पृथ्वीकायक कहते हैं।

(घ) जब कोई मनुष्य देव तिर्यंच गति से मरकर पृथ्वीकाय में जन्म लेने वाला है परन्तु अभी विग्रह गति में है

उसने अभी पृथ्वी काय की नौ कर्म वर्गणाओं को आहार पर्याप्ति रूप ग्रहण नहीं किया है, उस विग्रह गति वाले जीव को पृथ्वी जीव कहते हैं, इसी तरह अगले पांच स्थानों में भी चारों भेद लगा लेना।

छहकाय के जीवों के कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति बंध— पांच स्थावर की एक सागर, दो इन्द्रिय की पच्चीस सागर, तीन इन्द्रिय के पचास सागर, चौइन्द्रिय की सौ सागर, असैनी पचेन्द्रिय की एक हजार सागर, सैनी पचेन्द्रिय की सत्तर कोड़ा कोड़ी सागर।

नोट—एक समय में बंधा हुआ कर्म ज्यादा से ज्यादा ऊपर लिखी स्थिति तक सत्ता में रह सकता है, उस समय के बाद उस कर्म की सविपाक या अविपाक कोई सी भी निर्जरा जरूर हो जायगी।

एक मुहूर्त में एक जीव के ६६ हजार ३३६ वार जन्म मरण भेद— पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु ये चारों सूक्ष्म तथा चारों बादर इस तरह ये आठ भेद हो गये तथा निगोद सूक्ष्म बादर और प्रत्येक वनस्पति ये तीन भेद मिलाकर ग्यारह भेद बन गये हरएक भेद में छह हजार बारह बार जन्म मरण कर सकता है, दो इन्द्रिय में ८० बार, तीन इन्द्रिय में ६०, चौइन्द्रिय में ४०, वार असैनी पचेन्द्रिय में, ८ वार सैनी पचेन्द्रिय

तिर्यंच में ८ वार, सन्मूर्च्छन मनुष्य में ८ वार, इस तरह एक जीव एक मुहूर्त में ऊपर लिखे हुवे १७ स्थानों में ६६३३६ वार जन्म मरण कर लेता है ।

नोट—ऊपर लिखे जन्म मरण लब्धि अपर्याप्तों की अपेक्षा हैं, यह जीव सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय जीव के एक स्वास लेने के समय में १८ बार जन्म मरण कर जाते हैं, ऐसा निकृष्ट पाप कर्म का उदय है।

विशेष नोट—(क) संज्ञी पचेन्द्रिय जीव एक मुहूर्त में ३७७३, स्वांसी स्वांस लेते हैं।

(ख) और लब्धि अपर्याप्तक जीव सञ्ज्ञी पंचेन्द्रिय जीव के सात स्वासोस्वास में ३६८५३$\frac{1}{7}$ बार जन्म मरण कर जाते हैं।

आठ कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति—

(क) दर्शनावरणी, ज्ञानावरणी, वेदनीय, अन्तराय इन चार कर्मों की तीस कोड़ा कोड़ी सागर।

(ख) दर्शन मोहनीय की सत्तर कोड़ा कोड़ी सागर।

(ग) नाम, गोत्र, इन दो कर्मों की बीस कोड़ा कोड़ी सागर।

(घ) देव तथा नारकी इन दो स्थानो की आयु ३३ सागर।

(ख) मनुष्य, तिर्यंच, इन दो स्थानों की आयु तीन पल्य।

आठ कर्मों की जघन्य स्थिति— (क) ज्ञानावरणी, दर्शनावर्णी, मोहनी, अंतराय, आयु, इन पांच कर्मों की जघन्य स्थिति अन्तर मुहूर्त।

(ख) नाम, गोत्र, इन दो कर्मों की जघन्य स्थिति आठ मुहूर्त्त।

(ग) वेदनीय कर्म की जघन्य स्थिति बारह मुहूर्त्त।

नोट—स्थिति बंध क्षपक श्रेणी वाले के दसवें गुण स्थान तक ही बंधता है। वेदनीय कर्मकी जघन्य स्थिति भी १२ मुहूर्त की पड़ती है तब इसका अर्थ यह हुवा कि जिस जीव के जघन्य स्थिति भी बंध चुकी है, वह बारह मुहूर्त तक मोक्ष नहीं जा सकता, अर्थात् अंतकृत केवली नहीं हो सकता, तेरहवें गुण स्थान में जो साता वेदनी कर्म का आश्रव होता रहता है उसमें स्थिति बंध नहीं पड़ता, जिस समय में साता वेदनी कर्म का आश्रव होता है, उसी समयी में उस आये हुए कर्म की निर्जरा हो जाती है अगले समय तक नहीं ठहरता।

कषायो के अनुभाग के १६ दृष्टांत कोष्टक—

कषाय नाम	अनन्तानुबन्धी	अप्रत्याख्यानी	प्रत्याख्यानी	संज्वलन
क्रोध	शिला रेखा	भूमि रेखा	धूलि रेखा	जल रेखा
मान	पत्थर का थम्ब	हाड़ का थम्ब	काठ का थम्ब	बेंत की लकड़ी
माया	बांसकी जड	हिरण का सींग	गो मूत्र की धार	गाय के खुरका
लोभ	क्रमिरग	गाढा चक्र किटमा	शरीर मैल	हलद रंग

पाप प्रकृतियों के अनुभागके चार दृष्टांत—नीम, काजी, विष, हलाहल।

नोट—यह उत्तरोत्तर अधिक अधिक कष्टदायक हैं।

पुन्य प्रकृतियों के अनुभाग के चार दृष्टांत—गुड़, खांड, शरकरा अमृत।

नोट—यह उत्तरोत्तर अधिक अधिक सुखदायक हैं।

सर्व घाति देश घाति प्रकृतियो के अनुभाग दृष्टात ४—शैल, अस्थि, दारू, लता

नोट—यह उत्तरोत्तर हलका हलका अनुभाग रहता चला जाता है।

कथा ४—आपेक्षणी, विपेक्षणी, निरवेदनी, समवेदनी।

आर्य ५ प्रकार—क्षेत्र, जाति, कर्म, चारित्र, दर्शन, आर्य।

चर्चा नं० १३

मध्य लोक के ४५८ अकृत्रिम चैत्यालय

(क) अठाई द्वीप में सुदर्शन, विजय, अचल, मंदिर, विद्युन्माली नाम के पांच मेरु पर्वत है, और इन पर ८० अस्सी, अकृत्रिम चैत्यालय है ।

(ख) इन पांचों मेरु सम्बन्धी कुलाचल पर्वत ३० तीस, गजदंत पर्वत २० बीस, बक्षारगिर पर्वत ८० अस्सी, वैताड़ पर्वत १७० एक सौ सत्तर कुरुवृक्ष १० दस, इक्ष्वाकार पर्वत ४ चार, मानुषोत्तर पर्वत की चारो दिशा चार, इस तरह इन सब का जोड़ ३१८ हुवा इन सब पर अकृत्रिम चैत्यालय है ।

(ग) आठवाँ नदीश्वर द्वीप में ५२, ग्यारहवें कुण्डलगिरि में ४ तेरहवे रुचिक गिरि मे ४, इस तरह सर्व का जोड़ ६०, इन सब पर भी अकृत्रिम चैत्यालय है ।

चर्चा नं १४ खरीजवार विषय—

षट लेश्या का निर्देश, वरण, परणाम, संक्रमण, क्रम, लक्षण, विशेष भेद १६— गति, स्वामि, साधन, सख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व ।

सामायिक के आठ भेद— प्रतिक्रमण, प्रतिसरण, परिहार धारण, निरदत्ति निंदा, ग्ररहा, शुद्धि ।

अवधि ज्ञान के भेद (क) देशावधि, परमावधि, सर्वावधि,
(ख) देशावधि के दो हैं, गुण प्रत्यय, भवप्रत्यय,
(ग) गुण प्रत्यय के छः भेद हैं, अनुगामी, अननुगामी, हीयमान, वर्द्धमान, ध्रुव, अध्रुव,

मन पर्यय ज्ञान के भेद २—ऋजुमति, विपुलमति।

श्रुतज्ञान भेद २०— पर्याय, अक्षर, पद, संघात, प्रतिप्रत्यक, अनुयोग, प्राभृत, पराभृत, वस्तु, पूर्व।
इन दस स्थान में से हर एक, स्थान के साथ समास संज्ञा और लगेगी, जिससे सर्व स्थान बीस बने उदाहरण— पर्याय, पर्याय समास, आदि।

द्वादशाँग वाणी का चर्चा नं० १५

द्वादशाँग वाणी भेद— (क) ग्यारह अंक प्रमाण (१६३४८३०७८८८) अक्षरों का एक पद होता है।
(ख) दस अंक प्रमाण (११२८३५८००५) पदों की द्वादशांगवाणी होती है।
(ग) बीस अंक प्रमाण (१८४४६७४४०७३७०९-५५१६१५) अक्षरों की बारह अंग तथा १४ प्रकीर्णक, सर्व के अक्षरों को मिलाकर सर्व-श्रुत ज्ञान होता है।

(घ) जिन अक्षरों का एक अंग नहीं बन सका उसको अंग बाह्य अर्थात् चौदह प्रकीर्णक कहते हैं, और इसके अक्षर आठ अंक प्रमाण (८०१०८१७५) है।

(ङ) बारह अंग के नाम तथा पद संख्या इस प्रकार है:—

अंग नाम	पद संख्या
(१) आचारांग	१८०००
(२) सूत्रकृतांग	३६०००
(३) स्थानांग	४२००६
(४) सवायांग	१६४०००
(५) व्याख्या प्रगति	२२८०००
(६) ज्ञात्री कथा	५५६०००
(७) उपासकाध्ययन	११७००००
(८) अतकृत्रदशांग	२३२८०००
(९) अनुत्तरोपपादिक दशांग	९२४४०००
(१०) प्रश्नव्याकरण	९३१६०००
(११) विपाक सूत्र	१८४०००००
(१२) दृष्टि प्रवाद	१००६८५६००५

द्वादशांगवाणी—(च) बारहवें दृष्टि प्रवाद नाम के अंग के पाँच
भेद पेटे भेदनाम तथा उनकी पद संख्या इस प्रकार है:—

भेद नाम	पद संख्या
(१) प्रथमानुयोग	५०००
(२) सूत्र	८८००००
(३) परिकर्म	१८१०५०००
(४) चूलका	१०४६४६०००
(५) पूर्वगता	६५०५०००० ५

(छ) दृष्टिप्रवाद नाम के बारहवें अंग के तीसरे परिक्रम नाम के भेद के पांच उपभेदो के नाम तथापद संख्या इस प्रकार है:—

भेद नाम	पद संख्या
(१) चद्र प्रज्ञप्ति	२६०५०००
(२) सूर्य प्रज्ञप्ति	५०३०००
(३) जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति	३२५०००
(४) द्वीपसागर प्रज्ञप्ति	५२३६०००
(५) व्याख्या प्रज्ञप्ति	८४३६००

(ज) दृष्टि प्रवाद नाम के बारहवें अग के चौथे भेद चूलका के नाम तथा संख्या इस पकार हैं :—

जलगता, थलगता, मायागता, आकाशगता, रूपगता, इन पांचो भेदों में से हरेक भेद की पद संख्या २०६८६००० हैं।

(झ) दृष्टि प्रवाद नाम के बारहवें अग के

पांचवें भेद पूर्वगता के चौदह पूर्वों के नाम तथा पद संख्या इस प्रकार है:—

	पूर्व नाम	पद संख्या
(१)	उत्पाद	१००००००००
(२)	अगरायणी पूर्व	९६०००००
(३)	वीर्य प्रवाद	७००००००
(४)	अस्ति नास्ति प्रवाद	६००००००
(५)	ज्ञान प्रवाद	९९९९९९९
(६)	सत्त प्रवाद	१०००००००
(७)	आत्म प्रवाद	२६०००००००
(८)	कर्मप्रवाद	१८००००००
(९)	प्रत्याख्यान	८४०००००
(१०)	विद्यानुवाद	११००००७०५
(११)	कल्याणवाद	२६०००००००
(१२)	प्राणवाद	१३०००००००
(१३)	क्रिया बिशाल	९०००००००
(१४)	लोक विंदु	१२५०००००७

(ब) सामायिक, चतुर्विंशति स्तवन, वदना, प्रतिक्रमण, वैनयक, कृतिकर्म, दस-वैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्पव्यवहार, कल्पाकल्प, महाकल्प, पुंडरीक, महा-पुंडरीक, प्रकीर्णक।

ये चौदह अंग वाह्य अर्थात् प्रकीर्णक कहलाते है, इनके अक्षर आठ अङ्क प्रमाण ८०१०८१७५ हैं सो इन अक्षरो का एक पद भी नहीं बैठता।

चर्चा नं० १६ मतिज्ञान के ३३६ भेद

मति ज्ञान भेद ३३६—(क) जिन पुद्गल परमाणुओं के स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, गुणों का संसारी जीव, पांच इंद्रिय, छठे मन द्वारा विषयरूप में का अनुभव करता है उन पुद्गल परमाणुओं की इस प्रकार १२ पर्यायें होती है, (१) एक, (२) बहु, (३) एकविध, (४) बहु विध, (५) अक्षिप्र, (६) क्षिप्र (७) निसृत, (८) अनिसृत (९) उक्त, (१०) अनुक्त, (११) अध्रुव, (१२) ध्रुव।

(ख) स्पर्शन, रसना, घ्राण, कर्ण, इन चार इन्द्रियों के पुद्गल परमाणु आकर टकराते हैं तभी स्पर्श, रस, गंध, शब्द का अनुभव होता है, इन चार इन्द्रियो में कुछ समय ऐसे भी होते हैं कि पुद्गल परमाणु आकर टकराते तो हैं पर संसारी आत्मा को यह अनुभव नहीं होता कि कोई परमाणु आकर टकराये हैं इस अवस्था का नाम व्यंजनावग्रह है। इसमें और

आगे के भेदों का प्रस्तार नहीं होता, इसलिये इसमें ऊपर कही चार इन्द्रिय तथा (क)में कही पुद्गल परमाणुओं की बारह पर्यायें गुणा करने से व्यजनावग्रह के ४८ भेद बनते है।

(ग) पाँच इन्द्रिय व छठे मन के द्वारा जब पुद्गल परमाणुओं की १२ पर्यायों का अनुभव होने लगता है, उसको अर्थावग्रह कहते है, इसके २८८ भेद इस प्रकार बनते हैं।

(घ) अर्थावग्रह में इतना अनुभव होता है, कुछ है। अनुभव की इतनी पर्याय को अवग्रह कहते हैं, क्या है अनुभव के इतने विस्तार को ईहा, कहते हैं, पदार्थ के निश्चय हो जाने के ज्ञान को, आवाय कहते हैं। निश्चित हुए ज्ञान को चिरकाल तक स्मृति मे रहने को धारणा कहते हैं। यह चारो अवस्थाएँ अर्थाग्रह में ही होती हैं, इसलिये चार अवस्थाओं में छहो इन्द्रिय और पुद्गल परमाणुओं की १२ पर्यायो को गुणा करने से २८८ अर्थावग्रह के भेद बन गये।

(ङ) इस तरह व्यजनावग्रह के ४८ भेद और अर्थावग्रह के २८८ भेद दोनों का जोड़ ३३६ बन गया।

चर्चा नं १७ शील के १८००० भेद इस प्रकार हैं

शील के १८००० भेद—(क) (चेतनस्त्री) तिर्यंचनी, मनुषणी, देवाँगना, इन तीन प्रकार भेदो को मन, वचन काय, इन तीन योगो मे गुणा करने पर ६ भेद हुवे, फिर कृत, कारित, अनमोदना, इन तीन भेदो मे गुणा करने पर २७ हुवे, फिर द्रव्य इन्द्रिय पाच, तथा भाव इन्द्रिय पाच इन दस से गुणा करने पर २७० भेद हुवे इनको आहार, भय, मैथुन, परिग्रह, इन चार सज्ञाओं से गुणा करने पर १०८० भेद हुवे, फिर १६ कषायों मे गुणा करने पर १७२८० भेद हुवे।

(ख) (अचेतन स्त्री) चित्राम, काष्ठ पाषाण, लेप, इन तीन प्रकार की स्त्रियों को मन से गुणा किया तो ३ तीन ही भेद बने, इनको कृत, कारित, अनुमोदना से गुणा करने पर ६ भेद बने फिर पाच इन्द्रियों से गुणा किया तो ४५ बने उनको १६ कषायो से गुणा किया तो ७२० भेद हुवे।

(ग) इस तरह चेतन स्त्री सम्बन्धी भेद १७२८०, अचेतन स्त्री सम्बन्धी भेद ७२० दोनों मिल कर शील १८००० भेद बन गये।

नोट—अचेतन कृत स्त्री में जो खाली मन के ही भंग ने गुणा किया गया है, इसका अर्थ यह है कि अचेतन स्त्री से मन में ही विकार उत्पन्न होता है, वचन काय सम्बन्धी चेष्टाएँ उत्पन्न नहीं होतीं।

चर्चा नं० १८ शील के अठारह हजार भेद दूसरे ढङ्ग से इस प्रकार भी हैं:—

शील के अठारह हजार भेद दूसरे ढग से— देवी, मनुषणी, तिर्यंचनी, अचेतन, इन चार भेदों को मन, वचन, काय से गुणा करने पर बारह भेद हुवे फिर कृत, कारित, अनुमोदना इन तीन भेदों से गुणा करने पर ३६ भेद हुवे, इनको पांच इन्द्रियों से गुणा करने पर १८० भेद हुवे, इनको काम के दस वेगों से गुणा करने पर १८०० भेद हुवे, इनको शील की विराधना करने वाले १० दोषों से गुणा करने पर १८००० भेद हुवे।

नोट—(क) काम के दस वेग इस प्रकार है, चिंता, देखने की इच्छा, निश्वांस लेना, ज्वर, शरीर-दाह, भोजन में अरुचि, महा मूर्छा, उन्मतता प्राण संदेह, मरण।

(ख) शील को भंग करने वाले दस दोष, इस

प्रकार हैं—शरीर शृंगार, गरिष्ठ भोजन, गीत, नृत्य, वादित्र सुनना देखना, समर्ग स्त्री से, विषय विकल, अंगनिरीक्षण, सत्कार, पूर्व भोगों का स्मरण, भावी चिंता, वीर्य निपात।

नोट विशेष—कहीं कहीं इन दोषों की बजाय दस धर्मों का न पालना भी शील के दस दोष बतलाये हैं।

चर्चा नं० १६ परमाद के ३७५०० भेद इस प्रकार हैं :—

परमाद भेद ३७५०००—पच्चीस कषायों को २५ विकथा से गुणा करने पर ६२५ भेद बने, इनको पांच इन्द्रिय और छठे मन से गुणा करने पर ३७५० भेद हुवे, इनका पांच निद्राओं से गुणा करने पर १८७५० भेद हुवे, इनको मोह और स्नेह, (राग द्वेष) से गुणा करने पर ३७५०० भेद हो गये।

चर्चा नं० २० खरीजवार विषयों का वर्णन इस प्रकार है :—

धारा १४— सर्व, सम, विषम, कृति, अकृति, घन, अघन, कृतिमात्रिक, अकृतिमात्रिक, घनमात्रिक, अघनमात्रिक, द्विरूपवर्गा, द्विरूपघन, द्विरूपघनघन।

वर्गणा २३— अणु, संख्याताणु, असंख्याताणु, आहार, अग्राह्य, तैजस, अग्राह्य, भाषा, अग्राह्य, मनो, अग्राह्य कार्माण, ध्रुव, सांत, सून्य, अप्रत्येक ध्रुव, सून्य, बादर निगोद, सून्य, सूक्ष्म निगोद, नभो, महास्कंध।

चर्चा नं० २१ गुणश्रेणी निर्जरा, स्थान, ग्यारह इस प्रकार हैं—

गुण श्रेणी निर्जरा स्थान ११— (क) सम्यक्त्व उत्पन्न होने से पहले जब मिथ्या दृष्टि जीव अनिवृत्ति करण माडता है, उस समय से गुण श्रेणी निर्जरा की तरतमता रूप ग्यारह स्थानों का प्रारम्भ माना गया है।

(ख) सम्यग्दृष्टि, देशवृत्ति, सरागसयम, अनतानुबधवियोजक, दर्शनमोहक्षपक, उपशमक, उपशातमोह, शपक, क्षीणमोह, स्वस्थानकेवली, समुद्घातकेवली।

(ग) ग्यारह स्थानों में से हरेक स्थान के हरेक समय में असंख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा करता है।

(घ) समूहरूप में हरेक अगले स्थान में पिछले स्थान से असख्यात गुणी कर्मों की निर्जरा होती है।

चर्चा नं०२२ गुणस्थानों में चढ़ने उतरने मरण करने का मार्ग इस कोष्टक में दिखाया गया है

चौदह गुण स्थानों में चढ़ने उतरने मरण करने के गुणस्थान

गुण स्थान	गुण स्थान चढ़ने के नं०	गुण स्थान उतरने के नं०	गुण स्थान मरण करने के
१ मिथ्यात्व	३.४.५.७	०	स्व स्थान
२. सासादन	०	१	२.१
३. मिश्र	४	१	०
४. अव्रत सम्यग्दृष्टि	५.७	१.२.३	१.२.४
५. देशवृति	७	१.२.३.४.	१.२.४
६. प्रमत्त	७	१.२.३.४.५	१.२.४
७ अप्रमत्त	८	४	४
८. अपूर्वकरण	०	७.४	४
९. अनिवृत्तिकरण	१०	८	४
१०. सूक्ष्म साम्पराय	११	९	४
११ उप शांत मोह	०	१०	४
१२. क्षीण मोह	१३ वां	०	०
१३. सयोग केवली	१४ वां	०	०
१४. अयोग केवली	सिद्ध	०	०

नोट—(क) सात, आठ, नव, दस, ग्यारह, उपशम श्रेणी चढ़ने वाला इन पाँचों गुणस्थान में कहीं तक भी चढ़ गया हो और अकस्मात् मरने का समय आ जाय तो पांचों गुणस्थान मे से किसी भी गुण स्थान में से स्थित हो वहाँ से सोधा चौथे गुण स्थान में आ जायगा। ऐसा क्रम नहीं है कि ग्यारहवें से श्रेणी वार दस नौ आदि सारे ही गुण स्थान ग्रहण करने पड़ते हो। चौदह गुण स्थान कोई सीढ़ी की तरह श्रेणी वद्ध स्थान नहीं है कि ऊपर चढ़ने वाले को या नीचे उतरने वाले को आस पास के सभी स्थान क्रम क्रम करके स्पर्श करने पड़े, चौदह गुणस्थान तो परिणामो की चौदह जातियाँ हैं, सो कोई से गुणस्थान मे सीधा कोई से गुणस्थान में चढ़ सकता है, जैसे पांचवां गुणस्थान वाला छठे को स्पर्श किये बिना एकदम सातवें गुण स्थान में ही चढ़ता है। इसी तरह उतरते समय और स्थानो को स्पर्श किये बिना सीधा ही मिथ्यात्व में आ सकता है।

(ख) एक से छठे गुण स्थान तक मरण के समय मिथ्यात्व, सासादन,अव्रत सम्यग्दृष्टि इन तीन

गुणस्थानो में से जिस गुणस्थानमें भी जीव उतर आवे उसी स्थान में जीव का मरण होजाता है।

चर्चा नं० २३ केवली समुदघात के समय, संख्या, अवस्था, योग इस प्रकार हैं—

समुदघात समय	अवस्था	योग
पहला	दंड	औदारिक काय योग
दूसरा	कपाट	औदारिक मिश्र काय योग
तीसरा	प्रतर	कार्माण योग
चौथा	लोकपूर्ण	कार्माण योग
पाँचवाँ	प्रतर	कार्माण योग
छट्टे	कपाट	औदारिक मिश्र काय योग
सातवाँ	दड	औदारिक काय योग

नोट—हरएक अवस्था में एक समय लगता है, पूर्ण समुदघात में आठ समय लगते है। आठवे समय अपने देह परमाण अवगाहनारूप हो जाता है, इसलिए उस अवस्था को भी समुद्घात कहा है।

चर्चा नं० २४ नौ नय के उत्तर भेद अट्ठाईस इस प्रकार हैं—

नौ नय के २८ भेद—(क) (द्रव्यार्थिक नय के दस भेद) कर्मोपाधि

निरपेक्ष शुद्ध द्रव्यार्थिक जैसे सिद्ध सदृश शुद्धात्मा १, उत्पाद व्यय गौणत्व से सत्ता ग्राहक शुद्ध द्रव्यार्थिक जैसे द्रव्य नित्य है २, भेद कल्पना निरपेक्ष शुद्ध द्रव्यार्थिक जैसे निज गुण पर्याय स्वभाव से द्रव्य अभिन्न है ३, कर्मोपाधि सापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिक जैसे आत्मा क्रोधादि स्वभाव वाला है ४, उत्पाद व्यय सापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिक जैसे द्रव्य एक ही समयमें उत्पाद व्यय ध्रौव्यात्मक है ५, भेद कल्पना सापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिक, जैसे आत्मा दर्शन ज्ञान गुणादिक वाला है ६, अन्वय सापेक्ष द्रव्यार्थिक जैसे गुण पर्याय स्वभाव युक्त द्रव्य है ७, स्वद्रव्यादि ग्राहक द्रव्यार्थिक, जैसे स्व-द्रव्यादि चतुष्टय की अपेक्षा द्रव्य है ८, पर द्रव्यादि ग्राहक द्रव्यार्थिक जैसे पर द्रव्यादि चतुष्टय अपेक्षा द्रव्य नहीं है ९, परमभाव ग्राहक द्रव्यार्थिक जैसे चैतन्य स्वरूप आत्मा है १०।

(ख) (पर्यायार्थिक नय के छह भेद)

अनादि नित्य १, सादि नित्य २, सत्ता गौणत्वेन अनित्यशुद्ध पर्यायार्थिक ३, समयापेक्ष अनित्य अशुद्ध पर्यायार्थिक ४, कर्मोपाधि निरपेक्ष नित्य शुद्धपर्यायार्थिक ५, कर्मोपाधि

सापेक्ष अनित्य अशुद्ध पर्यायार्थिक ६ ।

(ग) (नैगम नय के भेद तीन) अतीत, अनागत, वर्तमान ।

(घ) (संग्रहनय के भेद २) सामान्य, विशेष,

(ङ) (व्यवहार नय के भेद दो) सामान्य संग्रह भेद व्यवहार १, विशेष संग्रह भेद व्यवहार २

(च) (ऋजू सूत्र नय के भेद दो) सूक्ष्म, स्थूल,

(छ) (शब्द नय के भेद एक) शब्द नय,

(ज) (समभिरूढ़ नय के भेद एक) समभिरूढ़,

(झ) (एव भूतनय के भेद एक) एवभूत,

चर्चा नं० २५ उपनय भेद आठ

उपनय भेद ८—(क) (सद्भूत व्यवहारनय के भेद दो) १. शुद्ध, २ अशुद्ध ।

(ख) (असद्भूत व्यवहारनय भेद तीन) १ स्वजाति, २ विजाति, स्वजाति विजाति,

(ग) (उपचरित असद्भूत व्यवहारनय के भेद तीन) १. स्वजाति, २. विजाति, स्वजाति विजाति ।

चर्चा नं० २६ खरीजवार विषय कोष्टक

सत्य के भेद १०—जनपद, सम्मति, स्थापना, प्रतीति, नाम, रूप, व्यवहार, सभावना, भाव, उपमा,

विद्या पढ़ाने के कारण १०— (क) (वाह्य कारण ५) आचार्य, पुस्तक, क्षेत्र, भोजन, सहायक,
(ख) (आभ्यन्तर के कारण ५) निरोग शरीर, बुद्धि, उद्यम, विनय, ग्रन्थ से राग

चर्चा नं० २७ चौंसठ ऋद्धि इस प्रकार हैं—

चौंसठ ऋद्धि—(क) (बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह १८) केवल, अवधि, मनःपर्यय, बीज, कोष्ट, पादानुसारनी, सभिन्न श्रोत्र, दूर स्पर्शन, दूर रसन, दूर घ्राण, दूर दर्शन, दूर श्रोत्र, दस पूर्व, चौदह-पूर्व, अष्टांग निमित्त ज्ञान, प्रज्ञाश्रवण, प्रत्येक बुद्धि, वादित्य।

(ख) (चारण ऋद्धि के भेद ६) जल, जंघा, बीज, तंतु, पुष्प, पत्र, श्रेणी, अग्नि, आकाश, (हरेक ऋद्धि के साथ चारण लगा देना)

(ग) (विक्रिया ऋद्धि के भेद ११) अणिमा, महिमा, लघिमा, गरिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशत्व, वशित्व, अप्रतिघात, अतर्ध्यान, कामरूपणी।

(घ) (तप ऋद्धि के भेद ७) उग्र तप, दीप्त तप, तप्त तप, महा तप, घोर तप, घोर ब्रह्मचर्य, घोर पराक्रम, (हरेक के सामने तप लगा लेना।)

(ऋद्धि भेद) (ङ) (बल ऋद्धि के तीन भेद) मनोबल, वचन-बल, कायबल।

(च) (औषध ऋद्धि के ८ भेद) आमर्श, खल, जलस्पर्श, मलस्पर्श, विंदु स्पर्श, सर्व अवयव स्पर्श, आशिविप, दृष्टि विष, (हरेक के साथ मे औपधि ऋद्धि लगा लेना)

(छ) (रस ऋद्धि के भेद ६) आशीविष, दृष्टिविष, क्षीरश्रावी, मधुश्रावी, सर्पिश्रावी, अमृतश्रावी, (हरेक के साथ रस ऋद्धि लगा लेना)।

(ज) (अक्षीण महानस ऋद्धि के भेद दो) द्रव्य, क्षेत्र (हरेक के साथ ऋद्धि का नाम देना)

चर्चा नं० २८ चौरासी लाख योनी भेद इस प्रकार हैं:—

चौरासी लाख योनी भेद (क) सचित्त, अचित्त, मिश्र, शीत, उष्ण, मिश्र, संवृत्त, विवृत्त, मिश्र, (ये नौ भेद हुए योनी के)

(ख) (संसारी जीवो की उत्पत्ति के भेद ३) उपपाद, गर्भज, सन्मूर्च्छन।

(ग) (गर्भज उत्पत्ति के तीन भेद) जरायुज, अडज, पोत।

(घ) (योनि के और तरह तीन भेद) शंखावर्त, कुर्मोन्नत, बश पत्र।

चौरासी लाख योनी भेद

(ङ) (मध्य लोक के नीचे पहली पृथ्वी के तीन भाग)

अब्बहुल भाग अस्सी हजार योजन, पङ्क भाग, चौरासी हजार योजन, खर भाग सोलह हजार योजन ।

(च) पहले अस्सी हजार योजन में नीचे नक नो प्रकार के भवनवासी तथा सात प्रकार के व्यंतर देवों के भवन है ।

(छ) दूसरे चौरासी हजार योजन में नीचे तक असुरकुमार जाति के भवनवासीदेव तथा राक्षसजाति के व्यंतरदेवो के भवन हैं ।

(ज) तीसरे १६००० योजन वाले भाग में पहले नरक के नारकियों के बिले है, इस पहले नरक मे एक एक हजार योजन नीचे १६ पृथ्वी हैं । जिनके नाम इस प्रकार है —

चित्रा, वज्रा, वैडूर्या, लोहिताक्षा, मसुरकला, गोमेदा, प्रवाला, जातिसा, अंजना, अंजनमालिका, अंका, स्फटिका, चंदना, सर्म्वार्थका, वकुला, शैला ।

नोट—ऊपर लिखे सब भेदों के आधार पर ही चौरासी लाख योनी भेद बनते है, विशेष भेद श्री गोम्मटसारजी जीवकांड तथा चौबीस ठाणा चर्चा से देख लेना ।

चर्चा नं० २६ खरीजवार विषय कोठा

विकथा २५ —स्त्री कथा, अर्थ कथा, राजकथा, चारकथा, वैरकथा पाखंडकथा, देशकथा, भाषा कथा, गुणानुवाद कथा, दैवी कथा, निष्ठुर कथा, परपैशून्यकथा, कंदर्पकथा, देशकाल कथा, भंडकथा, मूर्खकथा, कलहकथा, परिग्रह कथा, खेतीकथा, संगीतकथा, वादित्यकथा, आत्मप्रशंसा कथा, पर परिवाद कथा, परनिंदाकथा, परपीड़ा-कथा ।

मनुष्य क्षेत्र के चन्द्र १३२ सूर्य १३२,

जम्बूद्वीप चन्द्र २,
लवण समुद्र चन्द्र ४,
धातकी खंड चंद्र १२,
कालोदधि समुद्र चंद्र ४२
पुष्करार्ध ७२
ये सब मिलकर १३२ चंद्रमा तथा इस तरह १३२ सूर्य है ।

शुरू के १६ द्वीपों के नाम

(१) जम्बूद्वीप (२) धात की खंड द्वीप
(३) पुष्कर वर द्वीप (४) वारुणिवर द्वीप
(५) क्षीरवर द्वीप (६) घृतवर द्वीप
(७) खदर वर द्वीप (८) नंदीश्वर द्वीप
(९) अरुणवर द्वीप (१०) अरुण भास्कर द्वीप

(११) कुंडलवर द्वीप, (१२) संखवर द्वीप,
(१३) रुचिकवर द्वीप, (१४) भुजगवर द्वीप,
(१५) कुसुमवर द्वीप, (१६) कौंचवर द्वीप,

मध्य लोक के अन्त के १६ द्वीप
(१) मन शिलावरद्वीप, (२) हड़तालवरद्वीप
(३) सिंदूरवरद्वीप, (४) श्यामवरद्वीप
(५) अजनवरद्वीप, (६) हिंगुलवरद्वीप,
(७) रूपवरद्वीप, (८) स्वर्णवरद्वीप,
(९) वज्रवरद्वीप, (१०) वैडूर्यवरद्वीप,
(११) नागरवरद्वीप, (१२) भूतवरद्वीप,
(१३) यक्षवरद्वीप, (१४) देववर द्वीप,
(१५) अहिमिंद्रवरद्वीप, (१६) स्वयभूरमणद्वीप

नोट—पहले सोलह तथा अन्त के १६ के बीच असंख्यात और द्वीप समुद्र हैं।

चर्चा नं० ३० समुद्रों के नाम तथा जल के स्वाद इस प्रकार हैं

समुद्रों के नाम व जल का स्वाद—
(क) जम्बूद्वीप से मिलते हुवे समुद्र का नाम लवण समुद्र है।
(ख) धात की खड के आगे कालोदधि समुद्र है।
(ग) आगे जो द्वीपों के नाम हैं वही समुद्रो के नाम हैं।
(घ) समुद्रों के जल के स्वाद इस प्रकार हैं—

(१) लवण समुद्र का जल खारा है। (२) कालोदधि तथा स्वयंभूरमणसमुद्र का जल स्वादिष्ट है। (३) घृतवर समुद्र का जल घृत के समान है। (४) क्षीरवर समुद्र का जल दूध के समान है। (५) वारुणीवर समुद्र का जल मदिरा के समान है। (६) शेष सर्व समुद्रों के जल अमृत समान हैं।

चर्चा नं० ३१ एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक जीवों की उत्कृष्ट तथा जघन्य अवगाहना का कोठा इस प्रकार है—

पंचेन्द्रिय की अवगाहना

उत्कृष्ट अवगाहना	लम्बाई	चौड़ाई	ऊचाइमुख	जघन्य अवगाहना दृष्टान्त
एकेन्द्रिय में कमल	योजन १०००	योजन १	योजन १	अवगाहना के धारक
दो इन्द्रिय में शंख	योजन १२	योजन ५।४	योजन ४ मुख	अनुद्री
तीनइन्द्रिय में बिच्छु	योजन ४।३	योजन १।८	योजन १।१६	कुंथवा

	उत्कृष्ट अवगाहना लम्बाई	चौड़ाई	ऊंचाव मुख	जघन्य अवगाहना के दृष्टांत
चौ इन्द्रिय में भ्रमर	योजन ६	योजन ३।४	योजन १३	कान मक्षिका
पंचेन्द्रिय में मच्छ	योजन १०००	योजन ५००	योजन २५०	तदुल मच्छ

चर्चा नं० ३२

कभी कोई ऐसा समय आता है कि छह महीने तक न कोई जीव मोक्ष जाता है, न उपशम श्रेणी मांढ़ता है न क्षपक श्रेणी मांढ़ता है। परन्तु छह महीने का अन्तरकाल बीतने के बाद आठ समय में ६०८ जीव मोक्ष जरूर जाते हैं, ३०४ जीव उपशम श्रेणी मांढ़ते है, २२ जीव सयोग केवली नाम का तेरहवां गुणस्थान धारण करते है, उसका कोष्टक इस प्रकार है:—

आठ समय में मोक्ष जाने वाले ६०८ जीव

समय	प्रथम	दूसरा	तीसरा	चौथा	पांचवां	छठा	सातवां	आठवां	जोड़
उपशम श्रेणी	१६	२४	३०	३६	४२	४८	५४	५४	३०४
क्षपक श्रेणी	३२	४८	६०	७२	८४	९६	१०८	१०८	६०८
सयोग केवली	३	३	३	३	३	३	२	२	२२
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

चर्चा नं० ३३ फुटकर विषयों का कोष्टक इस प्रकार है।

विषय सिद्ध करने के १३ अनुयोग—	क्षेत्र, काल, गति, लिंग, तीर्थंकर, चारित्र, प्रत्येक बुद्ध, बोधित, ज्ञान, अवगाहना, अंतर, संख्या, अल्पबहुत्व ।
धर्म ध्यान भेद १०	आज्ञा विचय, अपाय विचय, विपाक विचय, संस्थान विचय, उपाय विचय, जीव विचय, अजीव विचय, वैराग्य विचय, लोक विचय, हेतु विचय ।
शुक्ल ध्यान के पहले पाये के ४२ भेद—	(क) द्रव्य से द्रव्यान्तर, गुण से गुणांतर, पर्याय से पर्यायांतर, भाव से भावांतर, मनोयोग वचन योग, काय योग। इन सातों को ६ द्रव्यों से गुणा करने पर ४२ भेद होते हैं।
सम्यक्त्व भेद १०—	१. आज्ञा, २. मार्ग, ३. उपदेश, ४. श्रुत, ५. बीज, ६. संक्षेप, ७ विस्तार, ८ अर्थ, ९. अवगाढ़, १०. परमावगाढ़ ।
वक्ता के गुण—	१. ऊँचा कुल, २ सुन्दर शरीर, ३. पुण्यवान, ४. पंडित, ५. अनेक मतों के शास्त्रो का पारगामी, ६. प्रश्न करने के पहले ही श्रोता का अभिप्राय जानने की सामर्थ्य, ७. सभा चतुर,

८. बार बार प्रश्न होने पर भी क्षोभित नहीं होना, ९. सम्पूर्ण शास्त्रों का पारगामी, १०. युक्ति प्रवीण, ११. लोभ रहित, १२. क्रोध मान माया रहित, १३. धर्मानुरागी, १४. मिथ्या सिद्धांत निराकरण में समर्थ, १५. वैराग्यवान, १६. उपगूहन अग में समर्थ १७. धर्मात्माओं के गुण प्रकाशक, १८ अध्यात्मरसिक, १९. विनयवान, २०. वात्सल्य अगधारी, २१. परोपकारी, २२ दातार, २३. शास्त्र सुना कर कोई सासारिक फल न चाहने वाला, २४ हमेशा मोक्ष की इच्छा रखने वाला, २५. दयालु, २६. सज्जन, २७. मिष्ट वचन, २८. शब्द ललित, २९. शास्त्र पढ़ते समय अगुली कड़काने वाले न हों, ३०. आलस जभाई लेने से रहित हो, ३१. प्रमाद में घूमने वाला न हो, ३२. पाँव पर पॉव रक्खे नहीं, ३३. उकडु बैठ नहीं, ३४. गोडे दोनो मोड़ कर न बैठे, ३५ दीर्घ स्वर से बोलने वाला न हो, ३६. मद स्वर से भी बोलने वाला न हो, ३७. श्रोता की इच्छा प्रमाण उसको प्रसन्न रखने के लिये कुअर्थ नहीं करे ३८. जिन वाणी के अर्थ को छिपाये

नहीं, ३९. अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के लिये जिनवाणी के अर्थ में हेर फेर नहीं करे, ४० जिस शब्द का अर्थ अपनी समझ में न आवे तो अपना मन माना अर्थ नहीं करे, ४१ अंत में नम्रता पूर्वक ऐसा प्रकट करे अज्ञान-वश मुझसे कोई विपरीत अर्थ कहा गया हो तो मै पश्चाताप करता हूँ, मैं मंद ज्ञानी हूं मुझमे अर्थ समझने में भूल हो सकती है भूल क्षमा होवे इस प्रकार के शिष्टाचार को लिये हुये हो।

श्रोता भेद १४— १ मट्टी, २ चालनी, ३ छेला, ४ बिल्ली, ५ तोता, ६ बगुला, ७ पाखान, ८ सर्प, ९ हंस, १० भैंसा, ११ फूटा घड़ा, १२ दश-मशक, १३ जोंख, १४ गाय।

नोट—यह श्रोताओं के स्वभाव बतलाने वाले, दृष्टांत हैं इनमें उत्तम, मध्यम, जघन्य, तीन तरह के दृष्टांत रूप से समझाये गये हैं।

उत्कृष्ट श्रोता के लक्षण—१ विनयवान, २ जिन धर्म प्रभावक, ३ गुरु उपदेश एकाग्रचित्त से श्रवण करने वाला, ४ उपादेय बुद्धि, ५ ज्ञान का क्षय उपशम विशेष हो, ६ आत्मरसिक, ७ गुणग्राहक, ८ निज औगुण परित्यागी,

९ बीज बुद्धि ऋद्धि समान बुद्धि, १० निरोग शरीर, ११ इन्द्रिय लोलुपता से रहित, १२ तरुण, १३ उच्च कुलीन, १४ सुन्दर शरीर वाला, १५ पुण्यवान्, १६ स्पष्ट बोलने वाला, १७ मिष्ट वचन बोलने वाला, १८ आजीविका की आकुलता से रहित, १९ गुरुभक्त, २० साधर्मियों की संगत, २१ साधर्मी कुटुम्ब वाला, २२ तराजू, २३ नेत्र, २४ कसोटी २५ दर्पण जैसी सिद्धात परखने वाले की बुद्धि वाला, २६ शास्त्र श्रवण, ग्रहण, धारण, स्मरण, बुद्धि, २७ चतुरता, २८ प्रश्नोत्तर विनय पूर्वक करना, २९ गुणवानो का गुणग्राही, ३० उप-कार न भूलने वाला, ३१ गुरु आज्ञा के अनुसार उपदेश करने वाला, ३२ गुरु उपदेश का पोषक वचन बोलने वाला, ३३ सदेह निवारण के लिये विनय पूर्वक प्रश्न करने वाला, ३४ उत्तर सुनकर संतुष्ट हो जाने वाला।

उत्कृष्ट श्रोता के लक्षण— गुरू के साथ वाद विवाद प्रश्न नहीं करना, गुरू आज्ञा बिना किसी के प्रश्न का उत्तर नहीं देना।

समोशरण की बारह सभा—	देव चार प्रकार ४, देवांगना चार प्रकार ४, मुनि १, अर्जिका तथा सर्व प्रकार की मनुषणी १, मनुष्य १, तिर्यंच १ ।
सत्तावन संवर के भेद—	गुप्ति तीन ३, समिति पांच ५, धर्म १०, अनुप्रेक्षा बारह १२, परीषह बाईस२२, चारित्र पाँच ५,

चर्चा नं० ३४ पंचस्थावरों के उत्तर भेदों के नाम

पंच स्थावरों के उत्तर भेद—	(क) (पृथ्वी काय ३६,) मट्टी, बालू रेत, कंकर, पत्थर, सिला, लवण, तांबा रांग, सीसा, रूपा सोना, हीरा, हड़ताल, हींगलू मेनसिल, तुच्छ, अंजन मूंगा, करौलक, अबरक, गोमेद, रुचिक्रय, काकणी, स्फटिक, पुखराज, वैडूर्य, चन्द्रकान्त, सूर्यकांत, जलकान्तमणि, गोरिकमणि, चन्द्ममणि, बरवर, रुच, मोच, मसार, मसार, गोल ।
	(ख) (अपकाय के पांच भेद) ओस १, पाला २, बूंद ३, मेघ ४, जल की कनका ५ ।
	(ग) (अग्नि काय के पांच भेद) ज्वाला १, अंगार २, लौ ३, भूभल ४, शुद्ध अग्नि ५ ।
	(घ) (वात काय के पांच भेद) प्रचंड पवन १, सूक्ष्म पवन २, गुंजा ३, मंडल ४, उत्कल ५ ।

(ङ)(वनस्पति काय के अनेक भेद) सिरा, सधि, पर्व, समभग, अहीरुक, छिनरु, मूल कदब, छाल, प्रवाल, कूंपल अकूर शालि, छोटी-राहवेन, शाखा, वडी डाहली, दल, कुसुम, फल, बीज।

चर्चा नं० ३५ वनस्पतिकाय के भेद इस प्रकार हैं—

वनस्पति के भेद—(क) सिरा, लम्बी लकीर जैसे ककडी मे।

(ख) सधि, छोटी लकीर जैसे दाड़िम नारगी।

(ग) पर्व, गांठ, जैसे साठा (गन्ना)।

(घ) कच्ची अवस्था, जिसमें संधि लगी दीखे नहीं।

(ङ) समभंग, तोडने पर बराबर टुकड़े हो जावें ततु लगा न रहे।

(च) अहिरु, तुश, तन्तु जिसमें न हो।

(छ) छिनरु जो काटने के बाद भी उग सके,

(ज) मूल, जो पृथ्वी मे लम्बे रूप में जावे।

(झ) कद, जो जमीन के अन्दर गाठ के रूप में फैले।

(ञ) छाल, (ट) परवाल, (ठ) कूपल,

(ड) अंकूरा, (ढ) शालि, (ण) छोटी राहवेल (त) शाखा, बड़ी डाली, (थ) दल, (पत्ते भी कहते हैं) (द) कुसुम, जिसको फूल कहते हैं। (ध) फल, जो फूल में लगता है, (न) बीज, जो बोया जाता है।

अप्रतिष्ठित प्रत्येक (प) जिसके तोड़ने पर सम भंग न होवे ततु लगा रहे।

(फ) जो वनस्पति, कद, मूल, छोटी शाखा, जिस कद की मोटी छाल ही हो इन अवस्थाओं को अनन्त काय कहते हैं।

प्रतिष्ठित प्रत्येक (ब) जिसमें निगोद राशि हो।

अप्रतिष्ठित प्रत्येक (भ) जिस कन्दादिक वनस्पति की पतली छाल हो, उसे अप्रतिष्ठित प्रत्येक समझो।

(म) जिसमें अनन्ता अनत जीव समान आयु के धारक एक साथ मरें एक साथ पैदा हों, उसे साधारण कहते हैं।

(य) निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात कोड़ा कोड़ी सागर हैं, जिसको असख्यात लोक प्रमाण राशि भी कहते है इसका अर्थ यह है कि चाहे इस जीव की एक श्वास मे अठारहवें भाग ही आयु हो परन्तु इस जीव का निगोद राशि में जीने

मरने का प्रवाह असंख्यात कोड़ा कोडी सागर तक चलता रहे।

(र) निगोद राशि में एक साथ ही जीने मरने वाले जीव या तो सर्व ही पर्याप्त होंगे या सभी अपर्याप्त होंगे सर्व जीवों का कर्म बंध तथा कर्म उदय समान ही होगा, नाना जीवो मे विषमता नहीं होती।

(ल) वनस्पति जब उत्पन्न होती है, तब अतर मूहूर्त्त तक चाहे वह प्रत्येक हो या अप्रत्येक या अप्रतिष्ठित हो प्रत्येक कोई न कोई भी हो एक अवस्था में रहेगी, अंतर-मूहूर्त्त समय के बाद फिर उसमें सर्व प्रतिष्ठित साधारण जीवराशि उत्पन्न हो जाती है।

(व) एकबादर शरीर निगोद जीव या सूक्ष्म शरीर निगोद जीव में, क्रमटे पर्याप्त बाद जीव या सूक्ष्म निगोद जीव उत्पन्न होते हैं।

(श) पहले समय में अनंतानंत जीव उत्पन्न होते हैं, दूसरे समय में इस पहली राशि के असख्यातवें भाग कम राशि वाले जीव उत्पन्न होते हैं घटने का यह क्रम आवली

के असंख्यातवें भाग प्रमाणकाल पर्यंत चालू रहता हैं, जघन्य एक समय जो उत्कृष्ट आवली के असख्यातवें भाग प्रमाण काल होता है, इतना काल अन्तराल पड़ता है, अर्थात् इस अन्तराल काल में कोई जीव जन्म मरण नहीं करता, इस तरह क्रमवार घटते घटते जब जघन्य निर्वृति अपर्याप्त, अवस्था धारण करने का काल शेष रह जाता है, तब यह जीने मरने का क्रम पूर्ण हो जाता है।

नोट—पच स्थावरों के वनस्पति नाम के पांचवें भेद की व्याख्या दृष्टांत पूर्वक दिखाई गई है।

चर्चा नं० ३६ विकलेंद्रिय जीवों के दृष्टान्त

विकलेंद्रिय जीवों के भेद— (क) (दो इन्द्रिय भेद वाले) जोख १, लट २ कृमी ३, गिडोल ४, वाल्वो ५, (नहारक) विशाली ६, सुलसी ७, (सुरसरी) गिजाई ८, कौड़ी ६, सख १०, सीप ११, कुंखि १२, बरातितां १३, अड़खड़िया १४, गएदुविंया १५, इत्यादि अनेक भेद।

(ख) (तीन इन्द्रिय भेद ६) कीड़ो १, बिच्छु २, कनखजूरा ३, कान मनाई ४, खटमल ५,

कुंथु ६, लीख ७, जूं ८, चिंटियां ९.
मदगोप (तीज) आदि

(ग) (चौइन्द्रिय भेद ९) मक्खी १, भ्रमर २,
डांस ३, मच्छर ४, टिड्डी ५, फड़को ६,
तितरी ७, भ्रमरी ८ कान मक्षिका ९,
इत्यादि भेद।

चर्चा नं० ३७ पंचेन्द्रिय के अनेक भेद

पंचेन्द्रिय क भेद—(तिर्यंच) हाथी, घोड़ा, बैल, भैंसा, सिंह, सूवर,
हिरण, चीता, रीछ, स्यल, स्याली,
मूपक (मूसा) सर्प, सिरीसर्प, चिड़ी,
कबूतर, मच्छ, मैंडक आदि।

चर्चा नं० ३८ तीन प्रकार के अंगुलों का स्वरूप—

अंगुल भेद ३—(नोट) तीन प्रकार के अंगुलों के हाथ, धनुष,
कोष, योजन, इनका प्रमाण अलग अलग
होता है।

(क) (उत्सेधांगुल) इस अंगुल के प्रमाण से चार
गति के जीवों के शरीर, नगर, मंदिर,
इत्यादि का प्रमाण बताया गया है।

(ख) (प्रमाणांगुल) इस अंगुल के प्रमाण से
द्वीप, समुद्र, पर्वत, वेदि, नदी, कुंड,

जगती देवों का नगर वेश, इत्यादि का प्रमाण बतलाया जाता है।

(ग) (आत्मांगुल) भरत ऐरावत आदि क्षेत्रों के मनुष्य के अपने वर्तमानकाल सम्बन्धी जो अंगुल होता है, उससे झारी, कलश, आरसा, धनुष, ढोल, जूड़ा, शैय्या, गाड़ा, हल, मूसल, सेल, शक्ति, सिंहासन, चंवर, दुंदुभि, पीठ, छत्र, मनुष्यों के मन्दिर, नगर, उद्यान आदि का प्रमाण बतलाया गया है।

चर्चा नं० ३६ वर्ग रूप स्थानों तथा उनमें बनने वाली संस्थाओं का कोठा इस प्रकार है

वर्ग संख्या	नाम संख्या स्थान	व्याख्या संख्या स्थान
१	वर्गमूल—	जिन समान दो राशियों को गुणा किया जाये, जैसे दो को दो में गुणा किया इसमें वर्गमूल राशि दो है।
२	वर्ग स्थान—	(क) दो समान राशियों को गुणा करने पर जो गुणफल राशि आवे, उसको दूसरा वर्ग स्थान कहते है। जैसे २×२ बराबर हुआ ४

वर्ग संख्या	नाम संख्या स्थान	व्याख्या संख्या स्थान
		पहला वर्ग स्थान ४×४ बराबर हुवा १६ दूसरा वर्ग स्थान १६×१६ बराबर हुवा २५६ तीसरा वर्ग स्थान, इसी अनुक्रम से आगे अनेक गणित राशियों भेदो का प्रमाण वर्णन किया जायगा।
३	जघन्य परिता-संख्यात का वर्ग शलाका—	संख्याता सख्यात स्थान बीतने पर यह सख्या राशि बनती है।
४	अर्द्ध छेद या जघन्य परीता असख्यात—※	नम्बर तीन की राशि से असंख्यात अस्थान बीतने पर
५	पल्य की वर्ग शलाका--	नम्बर चार की राशि से असंख्यात स्थान बीतने पर।

※नोट—न० ४ को दो खड में पढ़ना चाहिये ४ (क) अर्धछेद, ४ (ख) जघन्य परिता संख्यात ये दोनों असंख्यात २ वर्गस्थान बीतने पर अधिक अधिक सख्या वाले होते हैं।

वर्ग संख्या	नामसंख्या स्थान	व्याख्या सख्या स्थान
६	अर्द्ध छेद—	नम्बर पाँच की राशि से असंख्यात स्थान बीतने पर।
७	पल्य—	नम्बर छह की राशि से असंख्यात असंख्यात स्थान बीतने पर।
८	सूच्यगुल—	नं० ७ की राशि से असंख्यात असख्यात स्थान बीतने पर।
६	जगत श्रेणी का घणमूल—	नं० ८ से आगे ऊपर के क्रम प्रमाण।
१०	जघन्य परितानत का वर्ग शलाका—	नं० ६ से आगे ऊपर के क्रम प्रमाण।
११	अर्द्ध छेद—	नं० १० से आगे ऊपर के क्रम प्रमाण
१२	जगत परितानंत–	नं० ११ से ,,
१३	जघन्य युक्तानंत–	नं० १२ से ,,
१४	जीव राशि की वर्ग शलाका—	ऊपर के स्थान से अनंत स्थान बीतने पर।
१५	अर्द्ध छेद—	नं० १४ से आगे अनंत स्थान बीतने पर।
१६	जीव राशि—	नं० १५ से आगे अनत अस्थान बीतने पर।
१७	पुद्गल राशि	नं० १६ से आगे अनत स्थान बीतने पर।

वर्ग सख्या	नाम संख्या स्थान	व्याख्या संख्या स्थान
१८	अर्द्ध छेद—	नं० १७ से आगे अनंत स्थान बीतने पर।
१९	पुद्गल राशि—	नं० १८ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२०	तीन काल के समयों के वर्ग शलाका—	नं० १९ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२१	अर्द्ध छेद—	नं० २० से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२२	तीन काल—	नं० २१ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२३	आकाश की वर्ग शलाका	नं० २२ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२४	अर्द्धछेद—	नं० २३ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२५	आकाश—	नं० २४ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।
२६	धर्म अधर्म द्रव्य के अगुरु लघु गुण के अविभाग प्रतिच्छेद—	नं० २५ से आगे अनन्त स्थान बीतने पर।

वर्ग संख्या	नाम संख्या स्थान	व्याख्या संख्या स्थान
२७	जीव द्रव्य के अगुरु लघु गुण के अविभाग परिच्छेद—	नं० २६ से आगे अनंत स्थान बीतने पर।
२८	सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्त तक जीव के पर्याय ज्ञान के अविभाग परिच्छेद—	नं० २७ से आगे अनंत स्थान बीतने पर।
२९	तिर्यंच के जघन्य क्षायक सम्यक्त्व लब्धि के अविभाग परिच्छेद—	नं० २८ से आगे अनंत स्थान बीतने पर।
३०	केवल ज्ञान—	अनंतानंत वर्ग स्थानों का समूह

चर्चा नं० ४० चौबीस स्थानों का प्रमाण उत्तरोत्तर असंख्यात असंख्यात स्थान बीतने पर अधिक अधिक हैं उन चौबीस स्थानों के नाम इस प्रकार हैं।

चौबीस स्थान अधिक अधिक संख्या वाले—	(क) अग्निकाय की स्थिति के जीवों की तीन अवस्था, वर्ग शलाका, अर्ध-च्छेद, पूर्ण संख्या।

(ख) अग्निकाय जीवों की स्थिति का प्रमाण, (उपरोक्त तीन प्रकार)

(ग) सर्वावधि के क्षेत्र का प्रमाण, (उपरोक्त तीन प्रकार)

(घ) स्थिति बंधध्यवशाय स्थान, (उपरोक्त तीन प्रकार)

(ङ) अनुभाग बंधध्यवशाय स्थान (उपरोक्त तीन प्रकार)

(च) निगोद शरीरों की संख्या (उपरोक्त तीन प्रकार)

(छ) निगोद शरीरो की उत्कृष्ट स्थिति (उपरोक्त तीन प्रकार)

(ज) योगों के अनुभाग प्रतिच्छेद ।

चर्चा नं० ४१ फुटकर विषयों का कोठा इस प्रकार है ।

पुद्गल की पर्याय छह. ६—बादरबादर, बादर, बादरसूक्ष्म, सूक्ष्मबादर, सूक्ष्म, सूक्ष्मसूक्ष्म ।

पुद्गल की पर्याय दस,१०-शब्द, बंध, सूक्ष्म, स्थूल, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप, उद्योत ।

चर्चा नं० ४२ छह प्रकार के आहारों की व्याख्या इस प्रकार है—

आहार ६ प्रकार है—(क) कर्म आहार, और नो कर्म आहार, तेरहवें गुण स्थान तक सर्व संसारी जीवों के होता है ।

नोट—परन्तु विग्रह गति के तीन समय में और केवल समुद्घात के तीन समय में नो कर्म आहार नहीं होता । केवल कर्माहार ही होता है ।

(ख) देवों के मानसिक आहार है, (कंठ में से अमृत झरता है ।)

(ग) अंडे के उष्मा आहार है, (माता की पेट की गर्मी से ही बढ़ता है)

(घ) एकेन्द्रिय के लेपा आहार है, (एकेन्द्रिय जीव चारों ओर से हवा, मिट्टी, पानी, खेंच कर बढ़ते रहते हैं ।)

(ङ) विकलेन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय पशु तथा मनुष्य के कवलाहार है, अपने योग्य भोजन ग्रहण करने से ही शरीर बढ़ता है ।

चर्चा नं० ४३ तीन प्रकार के सम्यग्दृष्टियों की संख्या का प्रमाण उत्तरोत्तर अधिक अधिक इस प्रकार है—

तीन प्रकार की सम्यग्दृष्टियों की संख्या—

(क) (उपशम सम्यग्दृष्टि) पल्य के असंख्यातवें भाग, यह संख्या सर्व से कम है।

(ख) (क्षायक सम्यग्दृष्टि) ऊपर की संख्या से संख्यात गुणा परन्तु पल्य में संख्यात आवली का भाग देने पर लब्ध राशि।

(ग) (क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि) क्षायक सम्यग्दृष्टियों की राशि से आवली के असंख्यातवे भाग को गुणा करने पर लब्ध राशि प्रमाण।

नोट—पहले स्वर्ग में ऊपर लिखे हुवे तीनों ही प्रकार के सम्यग्दृष्टि पाये जाते है।

चर्चा नं० ४४ फुटकर विषयों का कोठा—

द्रव्य लेश्या ६—(क) शरीर के रंग को द्रव्य लेश्या कहते हैं।

(ख) पृथ्वी काय के जीवों के छह लेश्या, (जल,

काय के जीवों के शुक्ल लेश्या, तेज काय के पीत लेश्या, वायु काय के गोमूत्र या मूंगा के समान, या अवक्तव्य, वनस्पतिकाय और त्रसकाय के छहों लेश्या।

वेदक सम्यग्दृष्टि की भाव लेश्या—	(क)	चार कषायों की हल्की भारी अवस्थायें छह रंग के ऊपर बतलाई गई हैं। जैसे थर्मामीटर बुखार की गर्मी बतलाता है, कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल, ऐसे यह क्रमवार कषायों की उत्तरोत्तर हल्की हल्की अवस्थायें हैं।
	(ख)	अपर्याप्त मनुष्य, गर्भज मनुष्य के, कृष्ण, नील, लेश्याओं की कषाय होते हुए भी वेदक सम्यक्त्व होता है।
सोलह कषायों के वासना काल—		(संज्वलन चौकड़ी) अंतर मुहूर्त (प्रत्याख्यान चौकड़ी) एक रात दिन, (अप्रत्याख्यान चौकड़ी) ६ मास। (अनंतानुबंधि चौकड़ी) संख्यात वर्ष, असंख्यात वर्ष, अनंत वर्ष।
गर्भज जीवों के पाँच स्थानों के शरीरों की उत्कृष्ट अवगाहना—	(क)	१ नभचर, २ थलचर जीवों की अपर्याप्त अवस्था के शरीरों की उत्कृष्ट अवगाहना आठ धनुष है।
	(ख)	३ नभचर, ४ थलचर, जीवों की सन्मूर्च्छन

पर्याप्त अवस्था के शरीरों की उत्कृष्ट अव-
गाहना ६ नौ धनुष है।

(ग) ५ नभचर गर्भज पर्याप्त अवस्था के शरीर
की उत्कृष्ट अवगाहना ६ धनुष है।

चर्चा नं० ४५ फुटकर विषय—

ध्यानी मन की पाँच अवस्थायें— १ क्षिप्त, २ विक्षिप्त, ३ मूढ़, ४ एकाग्र चित्त, ५ प्रमत्त चित्त।

उत्कृष्ट अवगाहना—(क) १ जल चर, २ नभ चर, ३ थलचर में
सम्मूर्च्छन जीवों के शरीरों की अवगाहना
उत्कृष्ट बारह अंगुल है।

(ख) १ जल चर, २ नभ चर, ३ थल चर में
पर्याप्त जीवों के शरीरों की उत्कृष्ट अवगा-
हना जिन जीवों के जितनी अवगाहना
बताई है उत्कृष्ट अवगाहना होती है।

(ग) जलचर, गर्भज जीवों के पर्याप्त शरीर
की उत्कृष्ट अवगाहना ५०० योजन है।

चर्चा नं० ४६ व्यवहार काल के भेद—

व्यवहार काल भेद—(१) (समय) जघन्य से जघन्य काल।

(२) (आवली) जघन्य युक्ता सख्यात
समय की (इस को जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त
भी कहते हैं)

(३) (श्वासोछ्वास) सख्यात आवली का।

(४) (स्तोक) सात श्वासोछ्वास में एक समय अधिक।

(५) (लव) सात स्तोक का।

(६) (घड़ी) साढ़े अड़तीस लव की।

(७) (अंतर्मूहूर्त) एक समय अधिक आवली से लेकर एक समय कम दो घड़ी के अन्दर के समय का।

(८) (रात दिन) तीस मुहूर्त का।

(९) (पक्ष) पन्द्रह दिन का।

(१०) (महीना) दो पक्ष का।

(११) (ऋतु) दो महीना की।

(१२) (अयन) तीन ऋतु का।

(१३) (संवत्सर) दो अयन का।

(१४) (अतीत काल) अनन्तानन्त वर्ष का।

(१५) (अनागत काल) अतीतकाल से अनन्त गुणा।

चर्चा नं०४७ छह पर्याप्ति पूर्ण करने का काल

छह पर्याप्ति का काल— (क) अन्तर्मूहूर्त काल के अन्तर भेद अनेक है, हरेक भेद को भी अन्तर्मूहूर्त हो कहते है।

(ख) आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा, मन, इन छह पर्याप्तियों की पूर्ति का काल पहली पर्याप्ति के काल से असंख्यात गुणा ज्यादा है।

(ग) हरेक पर्याप्ति के पूर्ण करने के काल को भी अन्तर्मूहूर्त काल कहते हैं, और छहों पर्याप्तियों के पूर्ण होने के जोड़ रूप काल को भी अन्तर्मूहूर्त ही कहते हैं।

(घ) ऊपर की छह पर्याप्ति जिस क्रम मे बताई गई हैं, उसी क्रम से एक के बाद दूसरी पर्याप्ति, सख्यात गुणे ज्यादा काल में पूर्ण होती हैं, सब के अंत में मन पर्याप्ति पूरी होती है।

चर्चा नं० ४८ अढ़ाई द्वीप के क्षेत्र का प्रतर रूप प्रमाणांगुल—

अढ़ाई द्वीप प्रमाण क्षेत्र की अंक सख्या २४ अंक प्रमाण है—

९४४२५१४९६८१९४३४०००००००००,

नोट—यह ऊपर की सख्या २४ अक प्रमाण है।

चर्चा नं० ४९ चार गतियों में जब जीव जन्म लेता है तब कौनसी गति में पहले समय में कौन सी कषाय का उदय होता है ? सो बतलाते हैं।

चार गति जन्म (नर्क में) क्रोध का,
समय कषाय— (तिर्यंच में) माया का,
(मनुष्य में) मान का,
(देव में) लोभ का,

(ख) कषायों का विशद विवेचन श्री गुणधर आचार्य विरचित कषायपाहुड़ में था वीरसेनाचार्य रचित कषायपाहुड़ की विस्तृत टीका जयधवला मे विद्यमान है।

(ग) श्री पुष्पदन्त भूतवली आचार्य विरचित षट्‌खंड आगम के महाबन्ध अधिकार मे तथा श्री वीरसेनाचार्य रचित विशाल टीका महाधवल मे भी कषायों का विस्तृत वर्णन है।

चर्चा नं० ५० चार गतियों में चार कषायों का काल—

चार गति कषाय काल—(क) नरक गति, (१ लोभ) अंतर्मूहूर्त्त

काल, (२ माया) लोभ से संख्यात गुणा काल, (३ मान) माया से संख्यात गुणा काल, (४ क्रोध) मान से संख्यात गुणा काल।

नोट—नरक गति में लोभ कषाय का उदयकाल कम से कम है, और क्रोध कषाय का उदयकाल सबसे ज्यादा है। परन्तु सब से कम और सब से ज्यादा दोनों ही कालों का नाम अंतर्मूहूर्त्त है।

(ख) देवगति में, नरकगति से उलटा क्रम है, सबसे कम काल क्रोध कषाय का है, सबसे ज्यादा काल, लोभ, कषाय का है। कषायों का क्रम इस प्रकार है क्रोध, मान, माया, लोभ, अगली अगली कषाय का उत्तरोत्तर संख्यात गुणा काल है।

(ग) मनुष्य और तिर्यंच गति इन दोनों गतियों में चारों कषायों के उदय का क्रम से समान रूप है।

नोट—सब से कम अंतर्मूहूर्त्तकाल मान कषाय का है। बाकी तीन कषायों

का उत्तरोत्तर संख्यात गुणा संख्यात गुणा ज्यादा उदयकाल है। सबसे कम और सबसे ज्यादा दोनों ही कालों का नाम अंतर्मुहूर्त्त है।

चर्चा नं० ५१ फुटकर विषय—

कुदान १०—१. गाय, २. हाथी, ३ स्वर्ण, ४. घोड़ा, ५. भूमि, ६. स्त्री, ७. दासी, ८. रथ, ९. तिल, १०. सर्व वस्तुओं से भरा हुवा घर।

नोट—इन दस वस्तु के संग्रह करने में लोभ कषाय गर्भित है। कषाय के बढ़ने में, संसार बढ़ता है, इसलिये यह दस प्रकार दान कुदान कहलाते हैं।

गृहस्थ के ६ कर्म— १ पूजा करना, २ व्यापार करना, ३ दान देना, तप करना, संयम पालना, शास्त्र स्वाध्याय करना।

मिथ्या दर्शन में बतलाये हुवे स्नान मे-दस गुण— १ मन की प्रसन्नता, २ शरीर की निरोगता, ३ पसीना मल रहित, ४ स्त्री भोग अभिलाषा की वृद्धि, ५ भोजन में रुचि, ६ थकावट दूर हो, ७ गरमी शांत हो, ८ ग्लानि मिटे, ९ सुख उत्पन्न, हो, १० आलस दूर हो।

नोट—श्रृंगार रस के १६ आभरणों में स्नान को पहला स्थान दिया गया है। जैसाकि अन्य सिद्धान्त वाले कहते हैं—गंगा, जमुना इत्यादि में स्नान करने

मात्र से ही पाप दूर होता है और सद्‌गति प्राप्त होती है, परन्तु उनका ऐसा कहना भ्रम रूप है, कषायों को दूर किये बिना आत्म शुद्धि कैसे हो सकती है? स्नान तो अपने भीतर की कषायो का पोषक ही है वह धर्म कैसे हो सकता है।

चार प्रकार के आश्रम— १ ब्रह्मचारी, २ गृहस्थ, ३ वानप्रस्थ, ४ भिक्षुक

पांच प्रकार के ब्रह्मचारी— १ अदिक्षा, २ उपनयन, ३ गूढ़, ४ अवलम्ब, ५ नैष्टिक।

चर्चा नं० ५२ जिन पूजा के भेदः—

१. (नित्य पूजा) (क) प्रतिदिन अपने घर से स्नान करके, उज्ज्वल वस्त्र पहन कर, शुद्ध द्रव्य लेकर भगवान की प्रतिदिन पूजा करना, इसके अतिरिक्त—

(ख) जिन चैत्यालय का बनवाना।

(ग) जिन प्रतिमा विराजमान करना, करवाना।

(घ) जिन मन्दिर की प्रतिष्ठा कराना।

(ङ) जिन मन्दिर के खर्च के लिये जागीर आदि देना।

(च) गुरुओं की पूजा करना, तथा

(छ) जिनवाणी की पूजा करना इत्यादि सब नित्य पूजा है।

२. (चतुर्मुख पूजा) रत्नों के उपकरणों से पूजा करना, यह पूजा राजा लोग ही करते हैं।

३ (कल्प वृक्ष पूजा) जब तक पूजा होती रहती है तब तक दुखी जीवो को धारा प्रवाह पूर्वक दान दिया जाता है इस पूजा को चक्रवर्ती पूजा कहते हैं।

४. (इन्द्र ध्वज पूजा) सुमेरुगिरि, नन्दीश्वर द्वीप, आदि अकृत्रिम चैत्यालयों की साक्षात् पूजा इन्द्रादि देव लोग ही करते है।

चर्चा नं० ५३ छह प्रकार से पूजा—

पूजा ६ प्रकार से—(क) (नाम पूजा) भगवान का नाम जपना या भगवान का नाम उच्चारण करके द्रव्य चढ़ाना, यह नाम पूजा है।

(ख) (स्थापना पूजा) तीर्थंकरो की प्रतिबिम्ब के सामने द्रव्य चढ़ाना।

(ग) (द्रव्य पूजा) जो जीव आगामी काल में तीर्थंकर होने वाले हैं, उनकी वर्तमान में पूजा करना जैसे होने वाले २४ तीर्थंकरों की पूजा की जाती है अथवा जो तीर्थंकर पहले हो चुके हैं उनकी पूजा करना।

(घ) (भाव पूजा) जिस समय समोशरण में साक्षात भगवान विराजमान होते हैं, उस समय साक्षात् पूजा करना।

(ङ) (क्षेत्र पूजा) जिन स्थानों में पच

कल्याणक हुए हैं, उन क्षेत्रों की पूजा करना जैसे शिखर सम्मेद पूजा।

(च) (काल पूजा) जिस काल में पंच कल्याणक हुए हैं उसी काल में कल्याणक पूजा करना, जैसे कार्तिक बदी अमावस को निर्वाण पूजा।

चर्चा नं० ५४ फुटकर विषय—

रोजगार के भेद ६—१ (असि) फौज पुलिस की नोकरी।
२ (मषि) मुनीमी या सरकारी नौकरी।
३ (कृषि) खेती करना।
४ (वाणिज्य) व्यापार करना।
५ (पशु पालन) डेयरीफाम या वाहनक्रिया।
६ (दासता) कला कौशल तथा शिल्पविद्यादि

६ ऋतु— १ शिशिर, २ वसंत, ३ ग्रीष्म, ४ वर्षा, ५ शर्द, ६ हेम।

नोट—२ माह की १ ऋतु होती है।

चर्चा नं० ५५ क्षयोपशम सम्यग्दर्शन के तीन दोष

सम्यग्दर्शन के ३ दोष—१ (चल) जैसे समुद्र में लहर उठती हैं, वह समुद्र के बाहर तो नहीं जाती, परन्तु समुद्र की शांत अवस्था को चलायमान

कर देती है, इसी तरह जिसका मन कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरु में नहीं जाता, परन्तु सच्चे देव शास्त्र गुरु में मेरा तेरापन रखता है।

२ (मल) पदार्थों में शंका होने से परिणामों में कुछ मलिनता रहती है।

३ (अगाढ़) जैसे शुद्ध स्वर्ण पर मिट्टी लग जाने पर चमक में मंदता मालूम होने लगती है, इसी तरह जब यह भाव होते हैं कि शांति तो शांतिनाथ भगवान् ही कर सकते हैं, ऐसे देव गुरु शास्त्र के विषय में ध्यान को डगमग करने वाले परिणाम अगाढ़ दोष कहलाते हैं।

चर्चा नं० ५६ पुण्य पाप के ४६ भंग

पुण्य पाप के ४६ भंग—(क) करण के ७ भंग इस प्रकार हैं—

१ कृत, २ कारित, ३ अनुमोदना, ४ कृत-कारित, ५ कृत अनुमोदना, ६ कारित अनुमोदना, ७ कृतकारित अनुमोदना

(ख) योगों के ७ भंग इस प्रकार है—

१ मन, २ वचन, ३ काय, ४ मन वचन, ५ मन काय, ६ वचन काय, ७ मन वचन काय।

(ग) करण के ७ भंगो को योगो के सात भंगो से गुणा करने से ४९ भंग हो गये।

चर्चा नं० ५७ पर्याप्त जीवों की उत्कृष्ट अवगाहना

पर्याप्त जीवों की तीन इन्द्रिय, चौइन्द्रिय, दो इन्द्रिय, एकेन्द्रिय उत्कृष्ट अवगाहना–पंच इन्द्रिय, इन पांच स्थानो की उत्कृष्ट अवगाहना आगे आगे संख्यात घनांगुल गुणी बढ़ती गई, परन्तु सबसे छोटी अवगाहना और सब से बड़ी अवगाहना दोनों ही अवगाहनायें संख्यात घनांगुल कहलाती हैं।

चर्चा नं० ५८ पर्याप्त जीवों की जघन्य अवगाहना दृष्टान्त सहित

पर्याप्त जीवों	इन्द्रिय नाम	अवगाहना
की जघन्य	१. पंचेन्द्रिय मच्छ,	घनांगुल के संख्यातवें भाग
	२. चौइन्द्रिय कान मक्षिका,	पंचेन्द्रिय से ,, ,,
	३. तेइन्द्रिय कुंथवा	चौइन्द्रिय से ,, ,,
	४. दो इन्द्रिय अनुंदरी	तीनइन्द्रिय से ,, ,,

नोटः—सब से बड़ी अवगाहना और सब से छोटी अवगाहना दोनों ही घनांगुल के संख्यातवें भाग कहलाती है, घनांगुल के भी अनेक भेद हैं।

चर्चा नं० ५९ एकेन्द्रिय की उत्कृष्ट और जघन्य अवगाहना तथा त्रस की भी—

एकेन्द्रिय तथा त्रस की अवगाहना— (क) १ पृथ्वीकाय, २ जलकाय, ३ तेजकाय, ४ वातकाय, ५ प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति, इन पांचो स्थानों की जघन्य और उत्कृष्ट दोनों अवगाहना घनांगुल के असंख्यातवें भाग है।

(ख) अप्रतिष्ठित प्रत्येक की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यातवें भाग है, (हजार योजन है)

(ग) अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति की जघन्य अवगाहना अगुल के असंख्यातवे भाग है।

(घ) त्रस, स्थावर, सर्वलब्धि अपर्याप्त की जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग है।

चर्चा नं० ६० लौकिक गणित—

लौकिक गणित—(क) लौकिक गणित के दो भेद हैं।

१ लौकिक मान, २ अलौकिक मान।

(ख) लौकिकमान के ६ भेद हैं।

(१) (मान) पाई माणी आदि से नापना।

(२) (उनमान) तराजू से तोलना।

(३) (अवमान) चुलु आदि से नापना

(४ (गणनामान) गिनती करना (एक दो तीन आदि)

(५) (प्रतिमान) चिरमटी मामा आदि तोल

(६) (ततप्रतिमान) घोड़े आदि की कीमत का अंदाजा लगाना।

अलौकिक मान	नाम	जघन्य	उत्कृष्ट
चार प्रकार	द्रव्य मान	एक परमाणु	सर्वद्रव्य
	क्षेत्र मान	एक प्रदेश	सर्व आकाश
	काल मान	एक समय	तीन काल
	भाव मान	सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्य पर्याप्तक जीव का पर्यायज्ञान	केवल ज्ञान

उत्तर भेद क (द्रव्य मान के २ दो भेद)

१ संख्यात, २ उपमान,

ख. संख्यात के २१ भेद (जघन्य सख्यात आदि)

ग. उपमान के आठ भेद (पल्य आदि)

चर्चा नं० ६१ आचार के पांच भेद

पंचाचार ४२ भेद (क) ज्ञानाचार (१ कालाध्ययन) ज्ञानाभ्यास ८ प्रकार के समय पर ही पाठ और

शास्त्र पढ़ना।

(२ विनय) शास्त्र और ज्ञानियों की विनय करना।

(३ उपाधान) पाठ पढ़ने के समय इन्द्रिय दमन के लिये रसिक भोजन का त्याग करना।

(४ बहुमान) विनय पूर्वक शास्त्र स्वाध्याय करना।

(५ अनिह्नव) गुरु से सीखा हुवा ज्ञान किसी से नहीं छिपाना।

(६ अर्थ समग्र) अर्थ को समझ कर पढ़ना।

(७ व्यंजन) अर्थ व्यजन मात्रादिक को अच्छी तरह पढ़ना।

(८ उभय) ठीक पाठ भी करना अर्थ भी समझना।

(ख) दर्शनाचार गिशाकितादि आठ प्रकार।

(ग) चारित्राचार १३ भेद—गुप्ति ३, समिति ५, महाव्रत ५।

(घ) तपाचार १२ भेद—अन्तरंग तप ६, बहिरग तप ६।

(ङ) वीर्याचार १—१ एक प्रकार।

चर्चा नं० ६२ पुद्गल की १० पर्यायें और उनकी ३१ उत्तर पर्याय—

पुद्गल की	पर्याय नाम	उत्तर भेद
१० पर्यायें, २१ उत्तर पर्याय	शब्द १२	१ भाषात्मक, २ अभाषात्मक, ३ भाषात्मक का, ४ साक्षर, ५ अनक्षर, ६ अभाषात्मकका ७ वैश्रेषिक, ८ प्रायोगिक, ९ तत, १० वितत, ११ घन, १२ शौपिर।
	३ बंध	१ वैश्रेषिक, २ प्रायोगिक, ३ अजीव का जीव के साथ।
	२ सूक्ष्म	१ अन्त, २ आपेक्षिक
	२ स्थूल	१ अन्त, २ आपेक्षिक
	६ संस्थान	१ उत्कर, २ चूरण, ३ खंड, ४ चूर्णिका, ५ प्रातर, ६ अणुचटन,
	१ भेद	एक ही भेद
	१ तम	एक ही भेद
	२ छाया	१ वर्णादिक विकारात्मक, २ प्रतिबिम्ब मातृका।
	१ आतप	एक ही भेद
	१ उद्योत	एक ही भेद
	जोड़ १०	जोड़ ३१

चर्चा नं० ६३ मनुष्य क्षेत्र की संख्या तथा अढ़ाई द्वीप में रहने वाले मनुष्यों की संख्या

मनुष्य लोक तथा मनुष्य संख्या

(क) अढ़ाई द्वीप में, अढ़ाई द्वीप और दो समुद्रों का व्यास ४५ लाख योजन है, और प्रतर क्षेत्र उन्नीस अंक परमाण ४०५१४९६८९६२३४०००००० आत्मागुल परिमित होता है।

(ख) अढ़ाई द्वीप के गर्भज पर्याप्त मनुष्यों की संख्या २९ अंक प्रमाण है—

७९२२८१६२५१४२६४३३७५९३५४३९५०३३६

(ग) इस (ख) में लिखी हुई संख्या में अपर्याप्त मनुष्यों की संख्या मिलाकर इस प्रकार संख्या हो जाती है—

(१) जगत श्रेणी को सुच्यांगुल के प्रथम वर्गमूल से भाग देने पर जो लब्ध राशि आवे।

(२) इस लब्ध राशि को सुच्यांगुल के तृतीय वर्गमूल राशि से भाग देने पर जो लब्ध राशि आवे उसमें एक घटाकर शेष राशि।

(घ) क्षेत्र राशि कम में, मनुष्य राशि अधिक,

अवगाहना गुण की शक्ति से समा जाती है।

चर्चा नं० ६४ निगोद स्थान

निगोद स्थान

(क) पृथ्वीकाय, जलकाय, तेजकाय, वातकाय, देव शरीर, नारकी शरीर, केवली शरीर, आहारक शरीर, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति, इन नौ शरीरो में निगोदिया जीव नहीं होते हैं।

(ख) दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय, चौइन्द्रिय, सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय, असञ्ज्ञी पचेन्द्रिय, पचेन्द्रिय तिर्यंच, पंचेन्द्रिय मनुष्य, सप्रतिष्ठित वनस्पति। इन आठ शरीरों में निगोदिया जीव (जिनको अंग्रेजी मे Jerms कहते हैं) होते हैं।

नोट—१ पचेन्द्रिय मनुष्यों में केवली और आहारक शरीरों में निगोद राशि नहीं होती है, ऊपर के वर्णन में भी लिख चुके हैं।

(२) सूक्ष्म निगोदिया और पृथ्वी, जल, तेज, वात, ये जीव सम्पूर्ण लोकाकाश में भरे हुवे हैं, ये सब बिना आश्रय के है।

चर्चा नं० ६५ सन्मूर्च्छन मनुष्य स्थान—

सन्मूर्च्छन, मनुष्य स्थान	(स्त्री के) योनि स्थान, काख, स्तन, नाभि, मल, मूत्र ।
	(पुरुष के) मल, मूत्र ।
	(मृतक शरीर) स्त्री, पुरुष दोनों ।

चर्चा नं० ६६ जो जीव आहार करते हैं, परन्तु निहार (मल मूत्र) नहीं करते उन जीवों के नाम—

निहार नहीं करने वाले जीव	तीर्थंकर, बलभद्र, नारायण, प्रति नारायण, चक्रवर्ती, युगलिया मनुष्य, युगलिया तिर्यंच, तीर्थंकरों के माता पिता, लब्धिधारी मुनि, केवली, देव, नारकी ।

चर्चा नं० ६७ किस लेश्या में कितने समुद्घात होते हैं—

लेश्या पर समुद्घात	(कृष्ण, नील, कापोत) मारणांतिक, वेदना, कषाय, तेजस, वैक्रियक, यह पाँच समुद्घात होते हैं ।
	(पीत पद्म) ऊपर के पाँच और आहारक एक यह ६ समुद्घात होते हैं ।

(शुक्ल) ऊपर के छह, केवल एक, यह सात समुद्घात होते हैं।

चर्चा नं० ६८ किस जीव समास में कौनसा समुद्घात होता है, और उसका स्पर्शन क्षेत्र कितना है।

जीव समास पर समुद्घात क्षेत्र

नोट—मूल शरीर से बाहर आत्म प्रदेशो के फैलने को समुद्घात कहते है, उसके ७ भेद है, मारणांतिक, वेदना, कषाय, तैजस, वैक्रियक, आहारक, केवल।

मारणांतिक समुद्घात (क) देवगति मे एक समय में सब से ज्यादा मरण करने वाले जीवो की राशि व्यन्तर देवो में होती है। वह राशि असंख्यात समयों के बराबर होती है, इस राशि के पल्य के असंख्यातवें भाग राशि के जीव ऋजु गति (सीधी गति) से मरण करते हैं; इनके मरणांतिक समुद्घात नहीं होता।

(ख) ऊपर की राशि को निकाल कर शेष बहु भाग राशि में, जो व्यंतर देव मरण करते है, उनका वक्र गति में मरण होता

है वह मारणांतिक समुद्घात करते हैं।

(ग) एक समय में मारणांतिक समुद्घात करने वाले जीवों की जो राशि है, उसकी पल्य के असंख्यातवें भाग राशिवाले जीव दूरवर्ती क्षेत्र में जन्म लेते हैं।

(घ) ऊपर की एक भाग राशि को निकाल कर, शेष बहु भाग राशि वाले जीव निकटवर्ती क्षेत्र में जन्म लेते हैं।

(ङ) मारणांतिक समुद्घात का अंतर्मुहूर्त्त काल है।

(च) दूरवर्ती क्षेत्र में जन्म लेने वाले जीवों के मारणांतिक समुद्घात के समय आत्म प्रदेश मूल शरीर से १ राजू के संख्यातवें भाग लम्बे, चौड़े ऊँचे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं।

(छ) एक कोस ऊँचे शरीर वाले (भोग भूमिया) जीवों के शरीर मारणांतिक समुद्घात के समय मूल शरीर से तीन राजू लम्बे सूच्य अंगुल के असंख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे आकाश क्षेत्र मे फैल जाते हैं।

(ज) शुक्ल लेश्या और मारणांतिक समुद्-

घात में आत्म प्रदेश फैलने का आकाश क्षेत्र कुछ कम सात राजू लम्बा और सूच्यांगुल के सख्यानवें भाग चौड़ा ऊँचा है।

(२ वेदना समुद्घात) (क) जघन्य एक प्रदेश, और उत्कृष्ट मूल शरीर से तीन गुणी अवगाहना वाले आकाश क्षेत्र में आत्म प्रदेश फैलते है।

(ख) एक कोस ऊँचे शरीर वाले (भोग भूमियां) जीवों के वेदना समुद्घात के समय आत्म प्रदेश जघन्य एक प्रदेश मात्र, और उत्कृष्ट मूल शरीर से, तीन गुने आकाश में प्रदेश फैल जाते है।

(ग) तीन हाथ के ऊँचे शरीर वाले (कर्म-भूमिया) जीवों के आत्म प्रदेश वदना समुद्घात में जघन्य एक प्रदेश, उत्कृष्ट मूल शरीर से तिगुने आकाशक्षेत्र में फैल जाते है। (यहाँ शुक्ल लेश्या होती है)

(३ कषाय समुद्घात) कषाय समुद्घात में जघन्य एक प्रदेश, उत्कृष्ट मूल शरीर से तीन गुनी अवगाहना वाले, आकाश क्षेत्र में जीव के आत्म प्रदेश फैल जाते है। (यहाँ शुक्ल लेश्या होती है)

(४ वैक्रियक समुद्घात) (क) देवो के वैक्रियक समुद्घात के समय मूल शरीर से आत्म प्रदेश सख्यात घनांगुल लम्बे, सूच्यागुल के सख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं।

(ख) मामान्यतया वैक्रियक समुद्घात के समय जीव के आत्म प्रदेश मूल शरीर से सख्यात घनागुल प्रमाण आकाश क्षेत्रो मे फैल जाते है।

(ग) गुण प्रत्यय (ऋद्धि धारी मुनि) वैक्रियक समुद्घात के समय जीव के आत्म प्रदेश मूल शरीर से बाहर संख्यात घनांगुल प्रमाण लम्बे और सूच्यागुल के असख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं। (यहाँ शुक्ल लेश्या होती है)

(५ तेजस समुद्घात) (क) पीत, पद्म, दोनों लेश्या वाले जीव अगर तेजस समुद्घात करें तो उनके आत्म प्रदेश, मूल शरीर से बाहर बारह योजन लम्बे और नौ योजन चौड़े आकाश क्षेत्र मे फैल जाते हैं। (सूच्यांगुल के असंख्यातवें भाग

ऊँचाई का प्रमाण है)

(ख) तीन हाथ के शरीर और शुक्ल लेश्या वाले जीव, अगर तैजस समुद्घात करे तो उनके आत्म प्रदेश मूल शरीर से बाहर बारह योजन लम्बे और ९ नौ योजन चौड़े, और सूच्यागुल के असख्यातवें भाग ऊंचे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं।

(६ आहारक समुद्घात) पीत, पद्म, शुक्ल, तीनों लेश्या और सर्व अवगाहना वाले जीव अगर आहारक समुद्घात करें, तो उनके आत्म प्रदेश मूल शरीर से बाहर संख्यात योजन लम्बे, और सूच्यां-गुल के असख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं।

(७ केवली समुद्घात) केवली भगवान के शुक्ल लेश्या ही होती है, और जब वह केवल समुद्-घात करते हैं; तो उनके आत्मप्रदेश सर्व लोकाकाश में फैल जाते हैं, परतु दंड कपाट प्रतर लोक पूर्ण अवस्था में अपने अपने प्रमाणिक क्षेत्र में ही फैलते हैं।

नोट—एकेन्द्रिय जीवों के और कृष्ण, नील कापोत, तीन अशुभ लेश्या वालों के, मारणान्तिक, वेदना, कषाय, ये तीन ही समुद्घात होते हैं, और इनका विस्तृत वर्णन गोम्मटसार से देख लेना।

चर्चा नं० ६६ कोड़ि शिला

कोड़शिला (क) कोडशिला आठ योजन लम्बी आठ योजन चौड़ी एक योजन मोटी है।

(ख) चौथे काल में तीन खड के स्वामी नौ नारायण होते हैं। जिनका बल धीरे धीरे कम होता चला जाता है।

(ग) पहले नारायण कोड़ शिला को दोनों हाथों से उठाकर सिर के ऊपर तक ले जाते है।

(घ) अत के नवें नारायण पैर के गट्टे तक उठा सकते है (ये पृथ्वी मे चार अगुल ऊचा क्षेत्र बैठता है) अन्त के नवे नारायण कृष्णजी है।

चर्चा नं० ७० एकसौ उनहत्तर पदवीधारी पुरुष

१६६ पदवीधारी (क) २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ९ बलभद्र, यह तरेसठ

सलाका पुरुष कहलाते हैं।

कुल ६३

(ख) भगवान के २४ पिता, २४ माता, १४ कुलकर, २४ कामदेव, ११ रुद्र, ९ नारद, कुल १०६

इनमें उपरोक्त ६३ मिलाने से १६९ होते हैं।

(ग) इन १६९ पुरुषों में तीर्थंकर २४ चौबीस, कामदेव २४ चौबीस, कुल ४८, यह तो उसी भव से मुक्त हो जाते हैं।

(घ) भगवान के २४ चौबीस माता, २४ चौबीस पिता, कुलकर १४, यह ६२ जीव नियम से स्वर्ग जाते हैं, कालान्तर में मोक्ष जाना निश्चित है।

(च) १२ चक्रवर्ती, उसी भव में भी मोक्ष जा सकते हैं या स्वर्ग और नर्क में जाकर मनुष्य भव धारण करके मोक्ष जाना निश्चित है।

(छ) ९ नारायण, ९ प्रति नारायण, ९ नारद ११ रुद्र, यह ३८ जीव नियम से नरक में जाते हैं परन्तु भावान्तर में इनका भी मोक्ष जाना निश्चित है।

चर्चा नं० ७१ पांच पंचाश्चर्य और देवों के चार प्रकार के बाजे—

पाँच पचाश्चर्य	(क)	तीर्थंकरों के पंच कल्याणकों के समय और ऋद्धिधारी मुनियोंके आहार के समय पुण्य योग से आकाश से पाँच प्रकार की वर्षाएँ और चमत्कार होते हैं–१ रत्नवृष्टि, २ पुष्पवृष्टि, ३ गधोदक वृष्टि, ४ देव दुन्दुभि बाजों का बजना, ५ जय जयकार शब्द का होना।
देवों के ४ प्रकार के बाजे	(ख)	४ प्रकार के बाजों के भेद—(ज्योतिषी-देव) सिंहनाद, (भवनवासी देव) शंख, (व्यन्तरदेव) भेरी, (कल्पवासीदेव) घटा।

चर्चा नं० ७२ ऐरावत हस्ती पर २७ करोड़ नृत्य कारिणी देवी

ऐरावत हाथी	(क)	एक लाख योजन का मायामयी ऐरावत हाथी होता है।
	(ख)	उस हाथी के १०० मुँह होते है।
	(ग)	एक मुँह में ८ दाँत होते है।
	(घ)	हरेक दाँत पर एक सरोवर होता है, उस में १२५ कमलनी होती हैं।

(ङ) १ कमलनी के साथ २५ कमल होते।

(च) एक कमल में १०८ पत्ते होते है।

(छ) सर्व को गुणा करने पर २७ करोड़ पत्ते हुवे, हरेक पत्ते पर एक एक देवांगना नृत्य करती है, इस तरह देवांगना भी २७ करोड़ हुई।

नोट—तीर्थंकर भगवान के जन्म कल्याणक के समय सौधर्म इन्द्र तथा इन्द्राणी, इस हाथी पर बैठकर आते है, और भगवान को जन्माभिषेक के लिये मेरु पर ले जाते है।

चर्चा नं० ७३ दान की चार विशेषता—

दान की विशेषता पात्र विशेष, दाता, द्रव्य विशेष, विधि विशेष इन चार प्रकार की विशेषताओं से पुण्य के बंध में भी विशेषता हो जाती है।

चर्चा नं० ७४ चौरासी लाख उत्तर गुण—

चौरासी लाख (क) ५ हिंसादि पाप, ४ कषाय, ४ रति, अरति, भय जुगुप्सा, ३ योग (मन, वचन, काय) १ मिथ्यात्व, १ प्रमाद, १ पैशून्य १ अज्ञान, १ प्रतिग्रह, यह २१ पाप हैं।

(ख) १ अतिक्रम, १ व्यतिक्रम, १ अतिचार १ अनाचार, ये व्रतो मे ४ दोष लगते हैं।

(ग) १ पृथ्वी, १ जल, १ तेज, १ वात, १ प्रत्येक वनस्पति, १ साधारण वनस्पति, ३ विकल त्रय तीन, १ पंचेन्द्रिय, इन दस प्रकार के जीवों का घात करना ।

(घ) ऊपर लिखे हुवे दस प्रकार के जीवों का आरम्भ करना (संग्रह करना)

(ङ) १ स्त्री संसर्ग, १ काम विकारी पोष्टिक रस लेना, १ गंध इतर लगाना, १ विकारी सेज बिछाना, १ विकारी भूषण पहरना, १ विकारी गीत बाजे सुनाना, १ वासनाओं की पुष्टि के लिये पैसे कमाने की लालसा, १ दुराचारी पुरुषों की संगति, १ राज सेवा, वासनाओं की वृद्धि करना, कुल दस

(च) १ आकंपित, १ अनुमानिक, १ दृष्ट, १ बादर, १ सूक्ष्म, १ छेत्र, १ शब्दाकुल, १ बहुजन, १ अव्यक्त, १ तत्सेवी, ये आलोचना करने में दस दोष लगते हैं ।

(छ) १ आलोचना, २ प्रतिक्रमण, ३ तदुभय, ४ विवेक, ५ व्युत्सर्ग, ६ तप, ७ छेद, ८ मूल, ९ परिहार, १० उपस्थापना, ये दस प्रकार प्रायश्चित के भेद हैं ।

(ज) २१ × ४ × १० × १० × १० × १० × १० ×

इन सर्व को गुणा करने से ८४ लाख उत्तर गुण बन जाते हैं।

(८४ लाख दोषों का त्याग करने से उत्तर गुण कहलाते हैं)

चर्चा नं० ७५ फुटकर विषय—

आठ कर्मों के दृष्टांत

(१) (ज्ञानावर्णी) देवता की मूर्ति पर परदा।

(२) (दर्शनावर्णी) राजद्वार के बाहर द्वारपाल।

(३) (वेदनीय) शहद से लिपटी तलवार की धार

(४) (मोहनी) मदिरा (शराब) का नशा

(५) (आयु) पुलिस का काठ (जिसमें कैदी का बंधन)

(६) (नाम) चित्रकार

(७) (गोत्र) कुम्भकार

(८) (अन्तराय) भंडारी,

हिंसादि पापों के चार चार भेद — १ हिंस्य, १ हिंसक, १ हिंसा, १ हिंसाफल, इसी तरह हरेक पाप के चार चार भेद जानना।

पदार्थों के जानने के विशेषण— १ संज्ञा १ संख्या, १ लक्षण, १ प्रयोजन

सात धातु— १ रस, १ खून, १ मास, १ मेद, १ हाड़, १ मज्जा, १ शुक्र,

(शुक्र अर्थात् वीर्य से गर्भाधान होता है)

नोट—सात धातु जिस क्रम से लिखी गई हैं, उसी क्रम से एक के बाद दूसरी धातु बनती है, एक धातु से दूसरी धातु बनने में ४३ दिन लगते हैं, इससे शुक्र अर्थात् वीर्य ३० दिन में बनता है।

सात उप धातु — वात, पित्त, कफ, सिरा, स्नायु, चर्म्म, उदराग्नि,

नोट—ये सात उपधातु तथा ऊपर की सात धातु, जिन जीवों के अपने अपने स्थान पर रहती हैं उनके स्थिर प्रकृति का उदय कहा जाता है, और अगर ये चौदह धातु उपधातु अपने स्थान से चल विचल हो जाती हैं, तो उनके अस्थिर प्रकृति का उदय कहा जाता है।

चर्चा नं० ७६ तीन योगों का काल

तीन योगों का काल — सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, उभय मनोयोग, अनुभय मनोयोग, सत्य वचन योग, असत्य वचन योग, उभय वचन योग, अनुभय वचन योग, काय योग, ये उत्तरोत्तर आगे आगे संख्यात गुणे संख्यात गुणे ज्यादा ज्यादा काल तक ठहरते हैं, परन्तु किसी का भी काल अंतर्मुहूर्त्त से ज्यादा नहीं होता। (अंतर्मुहूर्त्त के भी अनेक भेद हैं)

चर्चा नं० ७७ द्रव्यों के २३ समान गुण

द्रव्यों के २३ गुण — १ अस्तित्व, २ नास्तित्व, ३ एकत्व, ४ अनेकत्व, ५ द्रव्यत्व, ६ पर्यायत्व, ७ सर्वगत्व, ८ असर्वगत्व

९ प्रदेशत्व, १० अप्रदेशत्व, ११ मूर्त्तत्व, १२ अमूर्त्तत्व, १३ सक्रियत्व, १४ अक्रियत्व, १५ चेतनत्व, १६ अचेतनत्व, १७ प्रमेयत्व, १८ अप्रमेयत्व, १९ कर्तृत्व, २० अकर्तृत्व, २१ भोगतृत्व, २२ अभोगतत्व २३ अगुरु लघुत्व।

६ द्रव्यों के ६ विशेषगुण—

(१ जीवका) चेतनत्व (२ पुद्गलका) रूपादिमत्व (३ धर्मका) गतिहेतत्व, (४ अधर्मका) स्थितिहेतुत्व (५ कालका) वर्तना हेतत्व, (६ आकाश का) अवगाहना हेतुत्व,

नोट—यह वर्णन श्री प्रवचनसारजी के अनुसार लिखा गया है।

चर्चा नं० ७८ जीव और पुद्गलों की गमनदिशा

जीव और पुद्गलों की गमन दिशा

(क) कर्म रहित जीव उर्द्ध गमन ही करता है, जिस क्षेत्र से गमन करता है, उसके ठीक ऊपर सिद्धशिला पर जाकर विराजमान हो जाता है।

(ख) जीव मरण करके विग्रह गति में चारो दिशाओं में तथा नीचे और ऊपर श्रेणी-वद्ध गमन करता है।

(विदिशाओं में गमन नहीं करता)

(ग) मध्यलोक से जीव मरण करके ऊर्द्ध भी और

अधोलोक में भी दोनो दिशाओं में गमन करता है।

(घ) परन्तु ऊर्द्ध लोक वाला अधोलोक में ही गमन करता है। कारण देव मरकर देव नहीं बन सकता।

(ङ) अधोलाक वाला मरण करके मध्य लोक तक ऊर्द्ध गमन ही करता है, कारण नारकी मरकर नारकी नहीं बन सकता।

(च) पुद्गल का परमाणु अधोलोक से ऊर्द्ध लोक में जाय तो सीधा ही गमन करता है, (तिरछा गमन नहीं होता)

(छ) शेप अवस्थाओं में जीव और पुद्गल चार दिशा, चार विदिशा, ऊर्द्ध और अधो इस तरह दसों दिशाओं मे गमन करता है।

नोट—यह वर्णन भी स्वार्थसिद्धि जी के अनुसार लिखा गया है।

चर्चा नं० ७६ चार गति योनि स्थान

चार गतियोनि स्थान (क) देव और नारकियों के चार योनि स्थान हैं,

अचित्त, शीत, उष्ण, सवृत्त,

१ २ ३ ४

(ख) मनुषणी के सात योनि स्थान हैं ।

७

सचित्त अचित्त, मिश्र शीत, ऊष्ण,
१ २ ३
मिश्र, संवृत्त, विवृत्त, मिश्र,
४ ५ ६ ७

(ग) एकेन्द्रिय के भी मनुष्यणी की तरह ७ सात योनि स्थान हैं ।

(घ) दोइन्द्रिय से पचेन्द्रिय तिर्यंच के ७ सात योनि स्थान है ।
१ सचित्त, २ अचित्त, ३ मिश्र, ४ शीत, ५ ऊष्ण, ६ मिश्र, ७ विवृत्त,

योनिस्थान (ङ) मनुष्यणी स्त्री की योनि के तीन आकार होते हैं ।
१ कूर्मोन्नत, २ संखावर्त, ३ वशपत्र

चर्चा नं० ८० एक समय में आहारक ऋद्धिधारी मुनियों की गणना

आहारक शरीर	आहारककाय योगी	आहारक मिश्रकाय योगी,
गणना	५४	२७ दोनों जोड़ ८१

चर्चा नं० ७१ जीवों की घटती घटती गणना के छह स्थान

घटती घटती जीवगणना स्थान

(क) हम जिन छह स्थानों का वर्णन करते है उनकी जीव संख्या पहले स्थान से अगले स्थान में संख्यात संख्यात गुणी घटती घटती है।

(ख) १ ज्योतिषी देव, २ व्यंतर देव, ३ योनिमति तिर्यंचणी स्त्री ४ पुरुषवेदि सैनी पचेन्द्रिय, ५ पीतलेश्या का धारक, सैनी-पचेन्द्रिय तिर्यंच, ६ पद्मलेश्या का धारक सैनी पचेन्द्रियतिर्यंच।

चर्चा नं० ८२ ग्यारह स्थान के जीवों की बढ़ती बढ़ती संख्या

जीवों की बढ़ती बढ़ती संख्या

(क) ग्यारह स्थानों के नाम—

१. सैनी पचेन्द्रिय गर्भज, नपुंसक वेदी,
२. सैनी पंचेन्द्रिय गर्भज, पुरुष वेदी,
३. सैनी पचेन्द्रिय गर्भज स्त्री वेदी,
४. सन्मूर्च्छन सैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्त नपुंसक वेदी।
५. सन्मूर्च्छन सैनी पंचेन्द्रिय अपर्याप्त

नपु सक वेदी ।

६. भोगभूमि पर, गर्भज सैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्त पुरुष व स्त्री वेदी ।

७. असैनी पंचेन्द्रिय गर्भज नपु सकवेदी,

८ असैनी पंचेन्द्रिय गर्भज पुरुषवेदी,

९. असैनी पंचेन्द्रिय गर्भज स्त्री वेदी,

१०. व्यतरदेव

११ ज्योतिषीदेव

(कुल ११ हैं)

जीवों की बढ़ती बढ़ती संख्या

(ख) जगत श्रेणी में एक बार आवली का असख्यातवां भाग और ६५ हजार ५३६ प्रतरांगुल का भाग देने पर जो लब्ध राशि आवे उसको आठ वादर सख्यात राशि कहते हैं, और यही पहले स्थान के जीवों की राशि संख्या है इससे ही आगे आगे स्थानो की गुणाकार राशि चलती है ।

(ग) पहले स्थान से पांचवें स्थान तक अनुक्रम से सख्यात संख्यात गुणी राशि संख्या बढ़ती बढ़ती है ।

(घ) पाचवें स्थान से छठे स्थान की राशि संख्या पल्य के असंख्यातवें भाग गुणी है ।

(ङ) छठे स्थान से ग्यारहवें स्थान तक अनुक्रम

से संख्यात गुणीसंख्यात गुणी राशि संख्या बढ़ती रहती है।

चर्चा नं० ८३ अक्षरों के उत्पन्न होने के शरीर में आठ स्थान—

अक्षरों के ८ स्थान (क) शरीर में अक्षर उत्पन्न होने के आठ स्थान हैं, १ हृदय, २ कंठ, ३ मस्तक, ४ जीभ का मूल, (फुंगली) ५ दांत, ६ नासिका, ७ तालवा, ८ होठ।

(ख) अकार, कवर्ग, हकार, और विसर्ग, इन अक्षरों की उत्पत्ति कंठ स्थान से होती हैं।

(ग) बाकी सात स्थानों से अक्षरों के उत्पन्न होने का विशेष वर्णन श्री गोम्मट्टसारजी से देख लेना।

(घ) अक्षरों के दूसरी तरह से इस प्रकार और भेद हैं- स्पर्शता, ईषत स्पर्शता, विव्रनता, ईषत विव्रतता,

चर्चा नं० ८४ बारह १२ प्रकार के वचन

बारह प्रकार के वचन बारह प्रकार के वचन इस प्रकार हैं—

(१) अप्रतिष्ठित वचन—क्रिया की पुष्टि का वचन जैसे भोजन किया है, (positive)

(२) कलह वचन—जिस वचन से दो आद्मियों में कलह उत्पन्न हो जाय।

(३) पैशून्य—परके दोषों को प्रगट करना ।

(४) प्रलाप वचन—जिस वचन से धर्म, अर्थ, काम, 'मोक्ष, कोई भी सिद्ध न हो, (गप्प शप्प)

(५) रतिवचन—जिन वचनो से पंचेन्द्रियो के विषयों में लालसा बढ़े ।

(६) अरति वचन—जिन वचनों से पंचेन्द्रियों के विषय पदार्थों में अरुचि, (नफरत) होजावे ।

(७) उपधि वचन—परिग्रह के इकट्ठा करने और रक्षा करने की असमर्थता प्रगट करने वाले वचन ।

(८) निकृत वचन—किसी को ठगने वाले वचन ।

(९) अप्रणति वचन—सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप इन चार आराधनाओं के अविनय करने वाले वचन ।

(१०) मोष वचन—चोरी करने के लिये प्रोत्साहन देने वाले वचन ।

(११) सम्यक्दर्शन वचन—सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तपरूप, परिणामों में ऋद्धि करने वाला वचन ।

(१२) मिथ्यादर्शन वचन—मिथ्या मार्ग का उपदेश करने वाला वचन।

चर्चा नं० ८५ श्वेताम्बर जैन आम्नाय और दिगम्बर जैन आम्नाय में मतभेद—

श्वेताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता
(१) केवली भगवान को निहार (मलमूत्र) होता है।	केवली भगवान को निहार नहीं होता।
(२) केवली को रोग होता है।	केवली को रोग नहीं होता।
(३) केवली कवलाहार करते हैं। (भोजन करना)	केवली कवलाहार नहीं करते। नौकर्म वर्गणाओं का हर समय आश्रव ही आहार है।
(४) केवली, केवली को नमस्कार करते हैं।	केवली केवली को नमस्कार नहीं करते।
(५) केवली को उपसर्ग होता है।	केवली को उपसर्ग नहीं होता।
(६) प्रतिमाओं को आभूषण पहनाते हैं।	नग्न प्रतिमाएं, (आभूषण रहित) होती हैं।
(७) तीर्थंकर पाठशाला में पढ़ते है।	तीर्थंकर स्वयम् बुध होते हैं पाठशाला में नहीं पढ़ते।
(८) तीर्थंकर की पहली देशना दिव्य ध्वनि खाली जाय।	तीर्थंकर की हर समय की दिव्यध्वनि से प्राणी लाभ लेते हैं।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(६) महावीर भगवान देवनंदा ब्राह्मणी के गर्भ में आये, इन्द्र ने उनको देवनंदा के गर्भ से निकालकर माता त्रिशला देवी के गर्भ में पहुँचा दिया, वहाँ जन्म हुवा।	महावीर भगवान् का गर्भ और जन्म दोनो ही कल्याणक माता त्रिशलादेवी के ही हुवे।
(१०) श्री आदिनाथ भगवान तथा उनकी स्त्री सुनन्दा युगलिया थे।	श्री आदिनाथ भगवान युगलिया नहीं थे माता मरुदेवी की कुख से अकेले ही उत्पन्न हुए थे।
(११) श्री आदिनाथ भगवान और उनकी सुनंदा बहन ने आपस में ब्याह कर लिया।	उनकी रानी सुनन्दा विद्याधर राजा सुकछ की लड़की थी।
(१२) केवली को छींक आती है।	केवली अठारह दोष रहित होते है छींक आदि कोई भी विकार नही होता।
(१३) गौतम स्वामी खंदक ब्राह्मण मिथ्या सिद्धांतवादी से मिलने गए।	श्री गौतम स्वामी चार ज्ञान के धारी सम्यग्दृष्टि गणधर थे, मिथ्यादृष्टि की धार्मिक विनय नहीं कर सकते।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(१४) स्त्री के पंचमहाव्रत होते है।	महाव्रत छठे गुणस्थान में होते है स्त्री पाचवें गुणस्थान से आगे नहीं चढ़ सकती।
(१५) स्त्री को मोक्ष होती है।	स्त्री के वज्र वृषभनाराच संहनन नहीं होता, इसलिये क्षपक श्रेणी मांड कर मोक्ष नहीं जा सकती।
(१६) स्त्री भी तीर्थंकर होती है। दीक्षा के समय इन्द्र श्वेत साडी पहनने के लिये भेट करता है।	स्त्री तीर्थंकर नहीं होती। वस्त्र धारी पचम गुणस्थान से आगे नहीं चढ़ सकता।
(१७) प्रतिमायें आभूषण सहित होती है।	जितने कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय और जिनमन्दिर है सर्व में प्रतिमाएं आभूषण रहित (नग्न) होती है।
(१८) उन्नीसवा तीर्थंकर मल्लीबाई स्त्री थी।	मल्लीनाथ तीर्थंकर पुरुष थे।
(१९) जुगलिया की ऊँची काया को दबाकर छोटा किया गया और भरतक्षेत्र मे लाई गई।	जुगलिया की काया अपने समय की काया से कम नहीं हो सकती और भोग भूमिका से कर्म भूमिका क्षेत्र मे लाई नहीं जा सकती।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(२०) जुगलिया को भोग भूमि से भरत क्षेत्र में लाकर हरिवंश की स्थापना की गई।	भोग भूमियां कर्म भूमिक्षेत्र में नहीं आसकते।
(२१) जती के चौदह उपकरण होते हैं।	जती के कमण्डलु, पीछी दो ही उपकरण होते हैं।
(२२) मुनिसुव्रतनाथ भगवान के घोड़ा गणधर था।	तिर्यंच पांचवें गुणस्थान से आगे नहीं चढ़ सकता, गणधर (पुरुष) नग्न दिगम्बर मुनि ही होते हैं।
(२३) मुनियों के लिये शिष्य आहार लाते हैं।	मुनि स्वयं ही चर्या के लिये श्रावक के द्वार पर जाते हैं, शिष्य का लाया हुवा भोजन नहीं लेते।
(२४) जति श्रावक के घर से आहार लाकर उपाश्रय में आहार करते हैं।	जति श्रावक के घर पर ही आहार करते हैं।
(२५) धर्म की निंदा करने वाले के मारने में पाप नहीं होता।	जति का निंदक और वंदक दोनों पर ही दया भाव होता है।
(२६) जुगलिया मरकर नरक में भी जा सकते हैं।	जुगलिया मरकर देवगति में ही जाते हैं।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(२७) भरतजी ने अपनी ब्राह्मी बहन को अपने विवाह के लिये रखा।	ब्राह्मी बाल ब्रह्मचारिणी रही और आर्यिका बन गई।
(२८) दान, तप, शील, सामायिक परिणामों से ही मोक्ष हो जाती है।	बारहवें गुण स्थान वरती शुद्धोपयोगी मुनि ही मोक्ष जा सकता है। (शुभोपयोग संसार और पुण्य का कारण है।)
(२९) भरत महाराज को घर में ही केवलज्ञान हो गया।	भरतजी ने भी अन्त में जिन-दीक्षा ली तब केवलज्ञान हुवा।
(३०) महावीर भगवान ने जन्म कल्याण के समय मेरु पर्वत को हिला दिया।	दि० आम्नाय में ऐसा कोई उल्लेख नहीं मिलता।
(३१) द्रौपदी पंच भरतारी थी	द्रोपदी अर्जुन की ही स्त्री थी।
(३२) गुरु चेले के कंधे पर चढ़े हुवे थे उसी समय चेले को केवलज्ञान हो गया।	पद्मासन या खड्गासन योग योगधारी नग्न दि० मुनि अवस्था के बिना केवल ज्ञान नहीं होता।
(३३) जयमाली जाति का माली महावीर भगवान का जमाई था।	महावीर स्वामी बाल ब्रह्मचारी थे और उच्च गोत्र का सम्बन्ध ऊँच गोत्र में ही होता है।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(३४) घात की खंड में कपिल नाम के नारायण को केवलज्ञान होगया।	नारायण पदवीधारियों को केवलज्ञान नहीं हो सकता, नियम से मरकर नरक जाते हैं।
(३५) वसुदेव के ७२ हजार स्त्री था।	इसका दि० आमनायें में उल्लेख नहीं मिलता।
(३६) मुनि शूद्र के घर भी आहार लेते है।	मुनि ऊँच कुली अष्ट मूल गुण-धारी सद्‌गृहस्थ के ही आहार लेते है।
(३७) देव मनुष्यणी से भोग करते हैं।	देव का शरीर वैक्रियक है, मनुष्यणी का शरीर औदारिक है इन दोनो शरीरो का आपस में भोग नहीं हो सकता।
(३८) सुलसा श्रावकनी के बेटा पैदा हुआ।	दि० आम्नाय में इस बात का कोई उल्लेख नहीं है।
(३९) चक्रवर्ती के ६०००० राणी होती है।	चक्रवर्ती के ९६००० राणियाँ होती हैं।
(४०) त्रिपिष्ट नारायण छीपा से उपजे।	नारायण ऊँच कुल से गर्भ में पैदा होते है।
(४१) बाहूवली का शरीर ५२५ धनुष नहीं था।	बाहूवली का शरीर ५२५ धनुष ऊँचा था।

(४२)	अनार्य देश में भी महावीर भगवान का विहार हुआ।	अनार्य देशों में तीर्थंकरों का विहार नहीं होता।
(४३)	चौथे काल में असंयमी की भी पूजा होती थी।	असंयमी की पूजा नहीं हो सकती।
(४४)	देवों का एक कोस मध्य लोक के चार कोस के बराबर होता है।	चार कोस वाले परिमाण का नाम योजन है उसको कोस नहीं कह सकते।
(४५)	प्राण जाते हो तो प्रतिज्ञा भंग कर सकते हैं।	किसी बड़ी से बड़ी आपत्ति में भी प्रतिज्ञा भंग करना पाप है।
(४६)	उपवास के दिन औषध ले सकते हैं।	उपवास के दिन चारो ही अहार का त्याग करना होता है। (लेह्य, पेय, स्वाद, खाद)
(४७)	समोशरण में तीर्थंकर नग्न दिखलाई नहीं देते है।	तीर्थंकर नग्न ही होते हैं और नग्न ही दिखलाई देते हैं।
(४८)	जतीके हाथमे डंडा होता है,	जती हाथमें डंडा नहीं ले सकते,
(४९)	मोरादेवीको हाथी पर चढ़ी हुई अवस्था में केवलज्ञान हो गया।	स्त्री पर्याय में केवलज्ञान नहीं हो सकता।
(५०)	भावलिंग और द्रव्यलिंग दोनो के बिना भी केवलज्ञान हो जाता है।	द्रव्यलिंग (नग्न दिगम्बर मुद्रा) भावलिंग (क्षपक श्रेणी) दोनो के होने पर ही केवलज्ञान होता है।
(५१)	चांडालादि भी मोक्ष जा सकते हैं।	ऊंच गोत्र मे और सजाति में जन्मा हुवा प्राणी हीमोक्ष जा सकता है
(५२)	सूर्य चन्द्रमा विमान सहित महावीर भगवान् के समोशरण में आये।	सूर्य चन्द्र विमान समोशरण में नहीं आते है देवो का वैक्रियक शरीर ही समोशरण में आता है।

श्वेताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता
(५३) दूसरे स्वर्ग का इन्द्र पहले स्वर्ग में आजाता है।	मनुष्य लोक में जिस स्वर्ग का बंध कर लिया है वही जीव जाता है स्वर्ग में जाकर स्थिति और आयु की अपकर्षण (घट-जाना) नहीं होता।
(५४) पहले स्वर्ग का जीव दूसरे स्वर्ग में चला जाता है।	स्वर्गों मे स्थिति और आयु का इस तरह उत्कर्षण (बढ़ना) नहीं होता।
(५५) बच्चे का जन्म देते समय जो मल बहता है उसके सिवाय शरीर के ६ द्वारों के मल. सुमल हैं।	सर्व ही प्रकार के मल अशुद्ध हैं।
(५६) युगलिया के मरने पर मृतक शरीर पड़ा रह जाता है।	युगलिया का शरीर आयु के अन्त में कपूर की तरह हवा में उड़ जाता है।
(५७) केवली भगवान् के मृतक शरीर का भी दाह संस्कार किया जाता है।	नाखून और केश के बिना केवली का परमौदारिक शरीर भी कपूर बन उड़ जाता है। परन्तु देव-लोग अपनी भक्तिवश मायामई शरीर की रचना करके मोक्ष कल्याण की पूजा करते हैं

श्वेताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता
	जिसको व्यवहार में दाह संस्कार कहते हैं।
(५८) यति के काम विकारी मन को श्रावक अपनी स्त्री द्वारा भी स्थिर कर सकता है।	काम विकारी मन वाला यति ही नहीं कहलाता और श्रावक ऐसा धर्मविरुद्ध कार्य नहीं कर सकता।
(५६) तीर्थंकरों के भी १८ दोष होते हैं।	तीर्थंकर अवस्था में कोई भी दोष नहीं होता।
(६०) तीर्थंकरों के शरीर से भी पांच स्थावर जीवों को भी बाधा होती है।	तीर्थंकरों का परमौदारिक शरीर अति सूक्ष्म होता है उससे किसी भी जीव को बाधा नहीं होती।
(६१) तीर्थंकरों की माता को १४ स्वप्न आते है।	तीर्थंकरों की माता को १६ स्वप्न आते हैं।
(६२) स्वर्ग १२ होते हैं।	स्वर्ग १६ होते हैं।
(६३) व्यासजी ने पचपन हजार वर्ष तक गंगादेवी से भोग किया।	औदारिक शरीर वाले मनुष्यों का वैक्रियक शरीर धारी देवियों से भोग नहीं हो सकता।
(६४) भोग भूमि ६६ हजार होती हैं।	अढ़ाई द्वीप में तीस भोगभूमि शाश्वती (हमेशा रहने वाली) होती हैं और भरत ऐरावत की ३० भोगभूमि कभी होती है कभी नहीं होती।

श्वेताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता
(६५) चमड़े (मशक) में रखा पानी निर्दोष है।	जिस जीव के चमड़े से मशक या कुप्पा बना हुवा हो उसमें रखे हुवे पानी में उस जाति के अनन्त सन्मूर्च्छन जीव पैदा होजाते है वह जल छूने लायक कभी नहीं रहता।
(६६) बासी (पुराना) घी और पकवान निर्दोष है।	सर्व पदार्थों में क्रिया कोश मे बतलाई हुई मर्यादा से बाहर अनन्त सन्मूर्च्छन जीव पैदा हो जाते है, इसलिये खाने के योग्य नहीं रहते।
(६७) महावीर भगवान् ने अपने माता पिता के स्वर्ग जाने के बाद दीक्षा ली।	महाबीर भगबान ने अपने माता पिता के सामने ही दीक्षा ली।
(६८) बाहुबलि ने युगल रूप धारण किया।	बाहुबलि दिगम्बर जैन मुनि बनकर मोक्ष गये।
(६९) अच्छा फल खाने में दोष नहीं।	त्यागी सचित्त अवस्था मे फल नहीं खा सकता।
(७०) युगलिया के मलमूत्र होता है।	युगलिया के मलमूत्र नहीं होता।

श्वेताम्बर मान्यता	दिगम्बर मान्यता
(७१) तरेसठ सलाका के पुरुषो के मलमूत्र होता है।	तरेसठ सलाका के पुरुषो के मल-मूत्र नहीं होता।
(७२) इन्द्र ६४ चौसठ होते हैं।	इन्द्र १०० एक सौ होते है।
(७३) परठो एवों अहार निर-दोष	कम मर्यादा वाला भोजन स्थान पर ही करना योग्य है।
(७४) दिगाम्बरी एक सौ इन्द्र मानते है परन्तु इन्द्र ६४ है।	दिगम्बर मान्यता ठीक है इन्द्र १०० ही हैं।
(७५) यादव वंशियो ने मास खाया।	यादववशी अहिंसावादी थे वह मास नही खाते थे।
(७६) मनुष्य मानुषोत्तर से बाहर जाता है।	मनुष्य मानुषोत्तर पवत से बाहर नहीं जा सकता।
(७७) कामदेव २४ नहीं होते।	कामदेव २४ ही होते है।
(८८) विदेह क्षेत्र १६० होते है।	विदेह क्षेत्र १६० होते है।
(७९) देव भगवान् मृतक शरीर में से दाढ़ (दांत) निकाल कर स्वर्ग ले जाते हैं और पूजा करते है।	भगवान् का छोड़ा हुवा शरीर कपूर की तरह उड़ जाता है सिर्फ नख तथा केश ही रह जाते है।
(८०) भगवान् मोक्ष जाते समय समोशरण में वस्त्र सहित होते हैं।	नग्न दिगम्बर मुद्राधारी केवली मुनि ही मोक्ष जाते है।

श्वेताम्बर मान्यता	दि० मान्यता
(८१) हाड़ की भी स्थापना करके पूजा कर सकते है।	हाड़ को स्पर्श भी नहीं करना चाहिये।
(८२) नाभिराजा और मरुदेवी जी युगलिया थे।	नाभिराजा और मरुदेवीजी युगलिया नहीं थे. परस्पर में व्याह संस्कारसे पति पत्नी थे,
(८३) नवग्रेयवैक वाले अहिमेंद्र नव अनुदिश पंच पचोत्तरों में चले जाते हैं।	देवगति से ही देवगति नहीं हो सकती, मनुष्य लोक में आना ही पड़ता है।
(८४) समुद्र के पास खारा उप समुद्र है।	समुद्र के अग को ही उप समुद्र कहते है।

नोट—श्वेताम्बर आम्नाय वाले भाई इन ८४ बातों को अछेरा (बात चीत न करने योग्य) कहते हैं।

चर्चा नं० ८६ फुटकर विषय

५ पाच संयम — १ पाँच व्रत, २ पाच समिति, ३ कषाय निग्रह चार, ४ मन, वचन, काय, योगों का त्याग तीन, ५ इन्द्री विजय पाँच.

परिहार विशुद्धि- चारित्र धारियों की गणना — परिहार विशुद्धि चारित्र धारी—मुनि एक समय में ज्यादा से ज्यादा ६६६७ हो सकते हैं।

चर्चा नं० ८७ भोग भूमियों के शरीरों का वर्ण (रंग)

भोग भूमिया (क) जघन्य भोग भूमियां, हरा पन्न के समान,
शरीर वर्ण (ख) मध्यम भोग भूमिया, सफेद चन्द्रमा के समान
(ग) उत्तम भोग भूमियां, पीत स्वर्ण के समान,

चर्चा नं० ८८ छह लेश्या वाले जीवों का राशि प्रमाण और काल प्रमाण

६ लेश्या प्रमाण नं० १ कृष्ण लेश्या—

१ (क) कृष्ण नील कापात वाले जीवों की जोड़ रूप पूर्ण राशि में, आवली के असंख्यातवे भाग का भाग दे दो।

(ख) (क) की पूर्ण राशि मे से (क) की लब्ध राशि को घटा दो।

(ग) (ख) मे एक लब्ध राशि घटने के बाद जो शेष बहु भाग राशि रही उस शेष बहु भाग राशि के भी तीन बराबर बराबर हिस्से करदो।

(घ) (ग) के तीन बराबर के भागो मे से एक भाग में फिर आवली के असंख्यातवें भाग का भाग दे दो।

(ङ) (घ) का एक भाग की पूर्ण राशि मे से एक लब्ध राशि घटादो।

(च) (ङ) की एक लब्ध राशि घटने के बाद जो शेष बहु भाग राशि रही उसमें (ग) के तीन बराबर हिस्सों में से दूसरा बराबर का हिस्सा मिलादो, जो जोड़ रूप-राशि बने वही कृष्ण लेश्या वाले जीवो की राशि संख्या है।

२. नं० २ नील लेश्या—

(क) कृष्ण लेश्या के (घ) में जो एक भाग लब्ध राशि आई है, उसमें आवली के असख्यातवे भाग को भाग दे दो।

(ख) (क) में लब्धराशि को (क) की पूर्ण एक भागराशि में से घटाने पर जो बहु भाग राशि रहे उसमें कृष्ण लेश्या के (ग) के तीन भागो में से एक भाग मिलादो जो जोड़ रूपराशि बने वह नील लेश्या वाले जीवो की राशि संख्या है।

नं० ३ कापोत लेश्या—

नील लेश्या के (क) में जो लब्ध एक भाग राशि आई है, उसमें कृष्ण लेश्या के (ग) की तीन बहु भाग राशि में से एक भाग राशि को इसमें जोड़ दो, जो जोड़ रूपराशि बने वही कापोत वाले जीवो की राशि सख्या है।

नं० ४ काल प्रमाण—

(क) कृष्ण, नील, कापोत तीनो लेश्याओ का जोड़ रूपकाल अन्तर मुहूर्त है।

(ख) परन्तु कृष्ण नील, कापोत लेश्याओं का काल अनुक्रम से एक से दूसरों का घटता घटता है। जिस गणित राशि से राशि सख्या निकाली गई है उसी गणित मे तीनों लश्याओं की काल सख्या निकाल लेना।

नं० ५—पीत, पद्म और शुक्ल लेश्या वालों की जोड रूप राशि सख्या असयात है।

नं० ६—परन्तु पीत लेश्या वालो की राशि सख्या से सख्यातवें भाग पद्म लेश्या वालो की राशि सख्या है।

नं० ७—पद्म लेश्या वाले जीवों की राशि संख्या के असख्यातवे भाग शुक्ल लेश्या वाले जीवों की राशि सख्या है।

नं० ८—जगत प्रतर में सख्यात गुणा पनट्ठी प्रमाण प्रतरांगुल का भाग देने से जो लब्ध राशि आवे उतना तेजो लेश्या वाले (पीत रग) तिर्यंचो की जीव राशि है।

नं० ९—पल्य के असख्यातवें भाग प्रमाण रूप शुक्ल लेश्या धारी जीवो का राशि प्रमाण है।

चर्चा नं० ८९ एक समय में समुद्घात करने वाले जीवों की संख्या

समुद्घाती जीव सख्या — एक समय में ज्यादा से ज्यादा बीस जीव चढ़ने वाले और बीस जीव उतरने वाले कुल जोड़ ४० जीव हो सकते है।

चर्चा नं० ९० पुद्गल की किन छह अवस्थाओं में सचिक्कणता ज्यादा ज्यादा पाई जाती हैं (अनुक्रम से)

सचिक्कणता के अंश — इन ६ प्रकार के पदार्थों में चिकनाई के अंश उत्तरोत्तर अनुक्रम से अधिक अधिक है।

१ जल, २ बकरी का दूध, ३ गाय का दूध, ४ भैंस का दूध, ५ ऊँटणी का दूध, ६ घृत।

चर्चा नं० ९१ पुद्गल के किन स्कंधों में रूखेपन के अंश उत्तरोत्तर ज्यादा से ज्यादा होते हैं।

रूखापन अंश — नीचे लिखे पदार्थों में रूखेपन के अंश उत्तरोत्तर ज्यादा ज्यादा हैं।

१ धूलि (धूल), २ बालू रेत, ३ कांकरा (कंकर)

चर्चा नं० ९२ क्षपक श्रेणी में चढ़ने वाले जीवों की गणना—

क्षपक श्रेणी वाले जीव — क्षपक श्रेणी में चढ़ने वाले जीवों के नीचे लिखे भेद हैं—

(१) बोधित बुद्धि ऋद्धिधारक १०८, (२) पुरुष वेदी १०८, स्वर्ग से आए १०८, प्रत्येक बुद्धि ऋद्धिधारक १०, तीर्थंकर ६, नपुंसक वेदी १०,

१० की वेदी, २८ अवधि ज्ञानी, २ उत्कृष्ट अवगाहना के धारक, जघन्य अवगाहना के धारक, ३८ अन्य दो स्थान, कुल संख्या जोड़ ४३२।

(२) क्षपक श्रेणी मे आधे २१६ जीव उपशम श्रेणी माढते हैं।

नोट—यह १ अन्तर मुहूर्त में श्रेणी माढ़ने वाले जीवों की राशि का जोड़ है।

चर्चा नं० ९३ सात समुद्घात करने वाले जीवों का स्पष्ट क्षेत्र और दिशा

७ समुद्घात क्षेत्र

(क) आहार समुद्घात और मरण समुद्घात करने वाले जीवों के प्रदेश सुच्यांगुल के संख्यातवें भाग चौड़े ऊँचे और अपने योग्य स्थान तक लम्बे आकाश क्षेत्र में फैल जाते हैं।

(इनका फैलाव एक ही दिशा में है)

(ख) शेष पांच समुद्घात करने वाले जीवो के प्रदेश दशों दिशाओं में यथायोग्य लम्बे चौड़े ऊँचे स्थान में फैल जाते हैं, इसका खुलासा वर्णन इसी पुस्तक में पहले आ चुका है।

चर्चा नं० ९४ नरकों के दुख

नरक दुख (क) छेदन, भेदन, तापन, ताड़न, शूलारोपन

(ख) दुखों के पांच कारण और यह हैं—

१ शरीर रोग, २ मानसिक कषायों की तीव्रता, ३ शीत ऊष्ण क्षेत्र जनित पीडा, ४ नारकियों का परस्पर में लड़ाना, असुरकुमार देवों का पिछले भव के बैर याद दिलाकर लड़ाई करवाना, ५ पांच करोड़, ६८ लाख, ९० हजार ५८४ प्रकार के रोग।

चर्चा नं० ९५ कर्मबंध के तीन भेद

कर्म बंध (क) १ द्रव्य बंध—कर्माण वर्गणाओं का रूखे चिकने अंशों के कम ज्यादा होने के कारण पहली कर्म वर्गणाओं के साथ नई कर्म वर्गणाओं का एक क्षेत्र अवगाही होने पर १ प्रकृति, २ स्थिति, ३ अनुभाग, ४ प्रदेश, बंध पड़ जाना।

नोट—योग द्वार से कारमाणवर्गणायें खिचकर तो आजाती हैं, परन्तु जब तक उनमें ऊपर लिखे चार प्रकार के बंध नहीं पड़ते वहाँ तक आई हुई नई कार्माणवर्गणाओं का एक क्षेत्र अवगाही होते हुवे भी विश्रसापचयरूप हो रहता है, द्रव्य बंध नहीं कहते।

(ख) २ भावबंध—रागादिक कषायों के निमित्त से जीव की स्वभाव परिणति का विभाव परिणति रूप हो जाना, इस अवस्था में आत्म रस में छूटकर पर पदार्थों का रस आने लगता है अर्थात् पर पदार्थों में अपणा बुद्धि हो जाती है।

(ग) ३ उभयबंध—आत्म प्रदेश विभाव परिणति रूप होकर राग द्वेष के कारण अपने चारों तरफ आकाश क्षेत्र में भरी हुई कार्माणवर्गणाओं को हर समय आश्रव करते रहते हैं (खेंचते रहते हैं) यहाँ विभाव परिणतिरूप आत्म प्रदेश निमित्त हैं और खींचने वाली कार्माणवर्गणाये नैमेत्तिक हैं परन्तु खिची हुई कार्माणवर्गणाये जब कषाय रूप परिणामों का निमित्त पाकर ज्ञानावरणादि आठ कर्म रूप परिणत होजाती हैं, तो फिर वह कर्मरूप कार्माणवर्गनायें जब तक आत्मा को सुभावपरिणति में ना आने दें विभाव परिणति रूप ही बनाये रखें तो इस सूरत में ज्ञानावर्णादि कर्म निमित्त होजाते हैं, और आत्मा नैमैत्तिक बन जाता है। इस वर्णन में पहली अवस्था में विभावरूप आत्मा निमित्त था और खींचने वाली कार्माण वर्गणायें नैमित्तिक थी परन्तु दूसरी अवस्था में पहली

अवस्था का बिल्कुल उत्तर हो गया कर्मरूप-कार्माण वर्गणायें निमित्त बन गईं और आत्मा नैमैत्तिक बन गई इस दो पत्ती सिद्धान्त को उभय बंध कहते हैं।

चर्चा नं० ६६ अक्षर ज्ञान के दस भेद

अक्षर ज्ञान १० भेद गुणे (क) अक्षर, प्रत-प्रत्य, अनुयोग ये तीनों में उत्तरोत्तर सख्यात संख्यातगुणे ज्ञान के अश बढ़ते बढ़ते हैं, जैसे अमावस के बाद शुक्ल पक्ष में उत्तरोत्तर चन्द्र कला बढ़ती चली जाती है।

(ख) अनुयोग मे प्राभृतक, प्राभृतक में ज्ञान के अंश चौगुने प्रकाशमान हो जाते हैं।

(ग) प्राभृतक प्राभृतक मे प्राभृतक में ज्ञान के अश चोबीस गुणे ज्यादा प्रकाशमान हो जाते हैं।

(घ) प्राभृतक से पूर्व में ज्ञान के अश १६५ गुणे ज्यादा प्रकाशित हो जाते है। इसका यह अर्थ हुवा एक पूर्व में १६५ भागों में भिन्न भिन्न विषयों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

(ङ) पूर्व के चौदह भेद और १६५ उत्तर भेद हैं—

नं०	नाम पूर्व	उत्तर भेद संख्या
१	उत्पाद पूर्व	१०

नं०	नाम पूर्व	उत्तर भेद संख्या
२	अग्रायणी पूर्व	१४
३.	वीर्यानुवाद	८
४.	अस्ति नास्तिप्रवाद	१८
५.	ज्ञान प्रवाद	१२
६.	सत्य प्रवाद	१२
७.	आत्म प्रवाद	१६
८	कर्म प्रवाद	२०
९.	प्रत्याख्यान प्रवाद	३०
१०.	विद्यानुवाद	१५
११.	कल्याणवाद	१०
१२.	प्राणवाद	१०
१३.	क्रिया विशाल	१०
१४.	त्रैलोक्य प्रगप्ति	१०
	कुल	१९५

(च) एक एक प्राभृत में २०-२० अधिकार हैं सर्व अधिकार मिलकर ३९०० बन गये।

(छ) एक प्राभृत में फिर २४×२४ प्राभृत प्राभृत अधिकार है, सर्व का जोड़ ९३६०० हो गया।

(ज) एक प्राभृत प्राभृत में चार चार अनुयोग हैं सर्व का जोड़ ३७४४०० हो गया है।

नोट—यह ऊपर लिखे हुए भेद श्रुतज्ञान के १४ पूर्व नाम के भेद के अन्तर्गत भेद हैं।

चर्चा नं० ९७ कुवादियों के ३६३ भेद तथा मुख्य मुख्य नेताओं के नाम

नं०	कुवादी	भेद संख्या	मुख्य नेता नाम
१	क्रियावादी	१८०	पिक, माया, रोसम, हारीत, मड, आश्रव, पलायन आदि।
२	अक्रियावादी	८४	मरीच, कपि, कपिल, उलूक, गार्ग्य, व्याघ्रभूति, वाड्वलि, माठर, मौद्गलायन इत्यादि।
३	अज्ञानवादी	६७	साकलम, वालकुलो कुश्रुति, मात्यश्रुग्नि, नारायण, कठमाध्यम, दिनमोद, पैप्पलद, वादरायण, स्विष्टका, दैत्यकायन, वसु, जौमेन्द, इत्यादि
४	विनयवादी	३२	वशिष्ट, पाराशर, जतुकर्ण, बाल्मीक, रोमहर्षणी, सत्य, दत्त, व्यास, एलापुत्र, उपमन्य, रौद्रदत्त, अगस्त इत्यादि।
	जोड	३६३	

चर्चा नं० ९८ प्रतिक्रमण के सात भेद

प्रतिक्रमण ७, (क) लगे हुवे दोषो के लिये पश्चाताप करना।

और दोषों की शुद्धि के लिये पंच परमेष्ठि की स्तुति करना, नमोकार मंत्र का जाप करना, प्रतिक्रमण कहलाता है।

(ख) १ दैनिक—चार पहर दिन के लगे हुवे पापों का शाम की सामायिक में पश्चाताप करना।

(ग) २ रात्रिक—चार पहर रात्रि में लगे हुवे पापों का प्रातःकाल की सामायिक में पश्चाताप करना।

३ पाक्षिक—पन्द्रह दिन के बाद।

४ चातुर्मासिक—चतुर्मास के बाद तथा हर चार महीने के बाद।

५ वार्षिक—बारह महीने के बाद।

६ ईर्यापथिक—कहीं से चलकर आवें उसके बाद।

७ सर्वपर्यायिक—मृत्यु के अन्त समय।

चर्चा नं० ६६ सम्यग्दृष्टि के ६३ गुण

सम्यग्दृष्टि के गुण — अंग ८, गुण ८, मद त्याग ८, मूल गुण ८, व्यसन त्याग ७, भय त्याग ७, अनायतन त्याग ६, मूढ़ता त्याग ३, मिथ्यात्व त्याग ३, अतिचार त्याग ५, कुल जोड़ ६३।

चर्चा नं० १०० दीक्षा धारण करने वालों के ८ गुण ७ चिन्ह

दीक्षा धारण गुण तथा चिन्ह (क) १ जिन वचन सुनने की इच्छा, २ जिन वचन सुनना, ३ ग्रहण करना, ४ याद रखना, ५ विचार करना, ६ पापोंका त्याग, ७ अशुभवाद, ८ तत्त्व का ठीक अर्थ समझने की बुद्धि।

(ख) १ धार्मिक क्षेत्र मे रहने वाला, २ तीन ऊँच कुलों में जन्म लेने वाला ३ आठ अंग शरीर के पूर्ण हो, ४ राज्य का गुनहगार न होवे, ५ निरोगी हो, ६ इन्द्रिय पूर्ण हो, ७ मंदकषायवान हो।

चर्चा नं० १०१ छह आवश्यक के ३६ भेद

६ आवश्यक ३६ भेद (क) १ देव पूजा, २ गुरु सेवा, ३ स्वाध्याय, ४ सयम, ५ तप, ६ दान।

(ख) १ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ क्षेत्र, ५ काल ६ भाव।

नोट—सर्व को यानी पहले छह भेदों का पिछले छह भेदों से गुणा करने पर कुल ३६ भेद बन जाते हैं।

चर्चा नं० १०२ मैत्री भावना के ६ भेद—

मैत्री भावना	१ जीवों को पाप से छुड़ाना, २ जीवों को धर्म में लगाना, ३ अन्य के गुणों का प्रकाशन करना, ४ अन्य के अवगुणों को ढकना, ५ दुखी जीवों को निराधार नहीं छोड़ना, ६ जीवों की शक्ति प्रमाण सहायता करना।

चर्चा नं० १०३ फुटकर विषय—

१ आप्त स्वरूप	तत्त्व उपदेशक, सर्वज्ञ सत्पुरुषों से सेवनीक वीतरागहितोपदेशी।
२ आगम स्वरूप	पूर्वापर विरोध रहित हो, सर्वज्ञ का कहा हुवा हो प्रत्यक्ष प्रमाण से बाधा न आती हो, शब्दागम, अर्थागम, ज्ञानागम, ये तीन भेद वाला भी हो।
३ पदार्थ स्वरूप	उत्पाद व्यय ध्रौव्य गुण वाला हो, गुण तथा पर्याय वाला हो, जिसके जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह भेद हैं।
देवों की आठ ऋद्धि	१ अणिमा, २ महिमा, ३ लघुमा, ४ गरिमा, ५ प्राप्ति, ६ प्राकाम्य, ७ ईसत्व, ८ वशित्व।

चर्चा नं० १०४ विनय करने के शब्द भेद

विनय शब्द	मुनियों को नमोस्तु (नमस्कार), अर्जिकाजी को वन्दना, ग्यारह प्रतिमाधारी श्रावक को इच्छामि।

चर्चा नं० १०५ फुटकर विषय

असत्य वचन के चार भेद	१ असत्य को सत्य कहना, २ सत्य को असत्य कहना, ३ वस्तु का उल्टा स्वरूप कहना, ४ पापकारी वचन कहना।
पाप वचन के ३ भेद—	१ गर्हित, २ सावद्य, ३ अप्रिय वचन।
प्रतिक्रमण के ६ भेद	१ दैनिक, २ रात्रिक, ३ पाक्षिक, ४ चातुर्मासिक, ५ वार्षिक, ६ आयु के अन्त में।
प्रायश्चित के ९ भेद	१ आलोचन २ प्रतिक्रमण, ३ तदुभय, ४ विवेक, ५ व्युत्सर्ग, ६ तप, ७ छेद, ८ परिहार, ९ उपस्थापन,
विनय चार प्रकार	१ सम्यग्दर्शन की, २ चारित्र की, ३ तप की, ४ उपचार की, (विनय)
वैयावृत्त के १० भेद	१ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ तपस्वी, ४ शैक्ष्य, ५ ग्लानि, ६ गण, ७ कुल, ८ संघ, ९ साधु, १० मनोज्ञ।
स्वाध्याय के पांच भेद	१ वांचना, २ पृच्छना, ३ आम्नाय, ४ अनुप्रेक्षा, ५ धर्मोपदेश।
वाचना के तीन भेद	१ शब्द, २ अर्थ, ३ उभय।
वाचना समय ४ शुद्धि	१ द्रव्य, २ क्षेत्र, ३ काल, ४ भाव।
अतिचार के चार भेद	१ अतिक्रमण, २ व्यतिक्रमण, ३ अतिचार, ४ अनाचार।
एकाविहारी मुनि के ५ गुण	१ विशेषज्ञानी हो, २ ऊँचा संहनन हो, ३ वैराग्य बलवान् हो, ४ मनोबल ज्यादा हो, ५ चिरकाल का दीक्षित हो।

चर्चा नं० १०६ पंचमहाव्रत की २५ पचीस सम्भावना

पच महाव्रत २५ भावना	(५ अहिंसा महाव्रत की) १ वचन गुप्ति, २ मनोगुप्ति, ३ ईर्यासमिति, ४ आदान निक्षेपण समिति, ५ परिस्थापन समिति ।
	(५ सत्यमहाव्रतकी)—१ क्रोध, २ लोभ, ३ भय, ४ हास्य भरे वचनो का त्याग करना । ५ वचना-विचार कर बोलना ।
	(५ अचौर्य महाव्रतकी)—१ सून्यागार (अकेले स्थान में नहीं जाना), २ विमोचितावास (छोड़े हुए मकान मे नहीं जाना), ३ परोपरोधादिकरण (जहाँ कोई आने से रोके वहाँ नहीं जाना), (४ भैक्ष्य शुद्धि भोजन लेना) ५ साधर्मी विसवाद (साधर्मियों से झगड़ा नहीं करना)।
ब्रह्मचर्य महाव्रत की ५	(१) स्त्री के राग भरे वचन नहीं सुनना । (२) स्त्री का मनोहरांग दृष्टि से नहीं देखना । (३) पहले भोगे हुवे भोग याद नहीं करना । (४) कामोद्दीपक भोजन नहीं खाना । (५) शरीर का शृंगार नहीं करना ।
परिग्रह त्याग महाव्रत की ५	पाच इन्द्रियों के मनोवाछित विषयों मे राग नहीं करना और मन के विरुद्ध विषयो में अरुचि (नफरत)।

चर्चा नं० १०७ कर्मों का अवाधाकाल

अवाधाकाल (क) कर्मों का बंध ज्यों का त्यों पडा रहे समय समय उदय शुरू न हो उतने समय का नाम अवाधाकाल है।

(ख) जब कर्म की स्थिति एक कोड़ा कोडी सागर होती है तो उसका अवाधाकाल एक सौ वर्ष होता है।

(ग) एक सौ वर्ष में दस लाख अस्सी हजार मुहूर्त होते है।

(घ) एक मुहूर्त अवाधाकाल नौ करोड पच्चीस लाख बाणवे हजार पाच सौ बानवे ९२५९२५९२ स्थिति वाले कर्म का होता है।

नोट—(क) इसी गणित से जिस कर्म स्थिति का अवाधाकाल चाहो निकल सकता है।

(ख) अवाधाकाल बीत जाने के बाद फिर कर्म स्थिति जितनी बाकी होती है वह हर समय के थोड़े थोडे प्रदेशो में खिरती रहती है परन्तु जब कर्म प्रदेश तीव्र अनुभाग के रूप में खिरने लगते है उस समय मनुष्य को बधे हुवे कर्म का फल प्रगट रूप में अनुभव में आने लगता है मन्द अनुभाग अनुभव में नहीं आता जैसे स्वर्गो

में असातावेदनीय का उदय हर समय मन्द अनुभाग में होता रहता है, परन्तु देवों के अनुभव में नहीं आता। इसी तरह नरकों में सातावेदनीय का उदय मन्द अनुभाग रूप हर समय होता रहता है परन्तु नारकियों को कुछ भी अनुभव नहीं होता।

यह वर्णन छपणासार के अनुसार लिखा गया है।

चर्चा नं० १०८ पुद्गल की द्रव्य पर्याय के तीन भेद—

पुद्गल पर्याय (क) पुद्गल परमाणुओं के आपस में मिलकर स्कंध मिलने को संघात कहते हैं।

(ख) पुद्गल स्कंध के परमाणुओं के बिखरने को भेद कहते हैं।

(ग) जब स्कंध में से कुछ पुराने परमाणु खिर जावें कुछ नये परमाणु जुड़ जावें इस अवस्था को भेद संघात कहते हैं।

चर्चा नं० १०९ दयादान के भेद

दया दान उत्तम—किसी जीव को दुखी मालूम करके उसके घर पर जाकर दान देना।

मध्यम—दुखी जनों को अपने घर बुला कर दान देना।

जघन्य—दुखी जन अपने घर आवे उसको दान देना।

अधम—दुखीजन से कुछ मजूरी कराकर कुछ देना।

अधमा अधम—दुखीजन अपने घर पर आकर कुछ याचना करे तो भी कुछ नहीं देना और दुर्वचन कहना।

पाच दोष — दान के और भी पाँच दोष इस प्रकार हैं—अनादर करके देना, कोई विलाप करे तब कुछ देना, कडवे बचन बोलकर देना, बहुत देर तक सता कर देना, कुछ भी देकर पछताना।

दया दान के कौन कौन पात्र हैं — बालक, वृद्ध, स्त्री, रोगी, पशु, जिसका कोई सहायक न हो, जिसका कोई स्वामी न हो, पुण्यवान जीव आपत्ति मे आ गया हो, किसी की इज्जत (आबरू) बिगड़ती हो, तिर्यन्चनी या स्त्री के प्रसूत हुवा हो (बच्चा पैदा होना), कोई कैद में पड़ा हो, कोई सर्दी गर्मी या भूख से पीड़ित हो, ऊपर लिखे प्राणियो को भोजन दवाई कपड़ा और आवश्यक चीजें दया कर देनी चाहिये, अभयदान सर्व प्राणियों को देना चाहिये।

चर्चा नं० ११० गृहस्थियों को कहां कहां स्नान करना चाहिये

गृहस्थियों के स्नान करने के स्थान

नोट—(१) जिस काम में थोडा आरम्भ होता हो, परन्तु परिणामों की निर्मलता से विशुद्धि बढ़ती हो तो देशव्रती गृहस्थ उस कार्य को करता है।

(२) पूर्ण प्रारम्भ के त्यागी तो महाव्रती ही होते हैं।

(३) किस किस अवस्था में कहाँ कहाँ स्नान करना (देव गुरु शास्त्र की) पूजा के समय, अस्पर्श शूद्र व रजस्वला हुई स्त्री से छू गया हो, दाह सस्कार में जाकर आया हो, चौर्य कार्य (हजामत कराई हो) तेल मालिश करवाई हो, अवशापुविष्टा, वीर्य आदि निकल गये हो वमन हो गया हो।

स्नान छने हुये पानी से करना चाहिए

चर्चा नं० १११ रसोई का बर्तन व पानी का बर्तन किस किस को नहीं देना,

दिया भी गया हो तो किस किस विधि से बर्तन की शुद्धि करना।

बर्तन शुद्धि (१) मिट्टी का बर्तन (घड़ा आदि) स्पर्श शूद्र ने छू दिया हो तो वह बर्तन रसोई से बाहर निकाल देना।

(२) रसोई से बाहर मिट्टी या धातु के बर्तन रखे हों तो उनको या पानी रखा हो तो उसको स्पर्श क्षूद्र छू सकता है।

(३) अगर अस्पर्श शूद्र रसोई के अन्दर के बर्तन छू लेवे तो पुराने देकर नये बदलवाले।

(४) अगर अस्पर्श शूद्र रसोई के बाहर के बर्तन छू लेवे तो आग में तपा लेना।

(५) जिस बर्तन में ऊंच कुली या कुटम्बी जन ने भोजन किया हो तो मॉज लेना मिट्टी आदि से।

यह कथन धर्म संग्रह श्रावकाचार जी के अनुसार लिखा गया है।

चर्चा नं० ११२ स्त्री के स्वाभाविक दोष

स्त्री के स्वाभाविक दोष

मोह की मूर्ति, काम विचार से आभूषित, शोक का घर, धीरता रहित, साहस रहित, भयभीत, माया से मैला हृदय, मिथ्यात्व और अज्ञान

का घर, दया रहित, झूठ वचन, अशुचि, चपल अंग, चपल नेत्र, अविवेकवान कलहवान, निःश्वास निकालने वाली, रुदन करने वाली (बेमतलब), क्रोधी, मानी, कृपणी-लोभी, हास्य कौतूहल वाली, ग्लानी नहीं करने वाली, मल सहित, अदेखसका भाव वाली, हठी बुद्धि, निर्लज्जता, अनेक स्थानों में निगोदिया सम्मूर्च्छन जीवों की उत्पत्ति वाली तथा त्रस-जीवों की उत्पत्ति के स्थान वाली, अच्छी या बुरी बात सुनकर हृदय में गुप्त न रख सकने वाली चिकनी-चोपड़ी बात करने में निपुण, विकथा सुनने में आतुर, भंड वचन बोलने में चतुर, घर के छः कार्य करने में चतुर, पूर्वापर विरोध सहित वचन बोलने वाली, पराधीन जीवन, गाली गीतादि गाने में चतुर, आरम्भ की बातो मे सलाह देने वाली पडिता, धन इकट्ठा करने में शहद की मक्खी समान, घर चलाने में चतुर।

नोट—इन बातो की स्त्री पर्याय में अधिकता मिलती है इसलिये यह बातें लिखी गई हैं, परन्तु स्त्री पर्याय में भगवान् की माता व सौधर्म इन्द्र की पटरानी और सोलह महासती भी हुई हैं।

जिनके नाम स्मरण करने से जीवों का कल्याण होजाता है परन्तु ऐसी ऊँचकोटि की स्त्रियों की संख्या अल्प है।

चर्चा नं० ११३ स्त्री की निर्लज्जता के कारण

स्त्री में निर्लज्जता (क) पगड़ी को शरम होती है पगड़ी नहीं पहनती।

(ख) मूछों की शरम होती है मूछें नहीं होती।

(ग) आँखों को शरम होती है घूंघट निकालती है।

(घ) नाक की शर्म होती है नाक बिंधी रहती है।

(ङ) छाती की शर्म होती है कोचली (आंगी) पहनती है।

(च) भुजा में पराक्रम होता है सो हाथों में चूड़ी होती हैं।

(छ) नाखून ना उतर जावे यह भय है, नाखून मेंहदी से रंग लेती है।

(ज) कांच (बगल) की शर्म होती है सो कांख खुली रहती है।

(झ) अनेक स्थानों पर सन्मूर्च्छन जीवों से मलीनता रहती है।

(ञ) हमेशा भयभीत और कायर रहती है।

(ट) शंका शील स्वभाव बना रहता है।

(ठ) सोलहवे स्वर्ग से आगे नहीं जा सकती।

(ड) पहल के तीन उत्तम सहनन नहीं होते।

(ढ) शुक्ल ध्यान न होने के कारण मुक्ति नहीं कही।

नोट—स्त्री की ऐसी निंद्य और शक्तिहीन पर्याय होते हुवे भी जो रागी पुरुष स्त्री में मोहित रहते हैं, आत्म कल्याण की भावना पैदा नहीं होती यह सर्व मोह तथा अज्ञान के प्रबल उदय का कारण है।

चर्चा नं० ११४ गर्भकल्याणक के समय भगवान् की माता की सेवा में नीचे लिखी कुमारी देवियाँ, क्या क्या कार्य करती हैं, जो तेरहवें रुचिकवर द्वीप की रहने वाली हैं।

५६ कुमारी (क) १ विजिया, २ वैजयन्ती, ३ जयन्ती, ४ अपराजिता, ५ नन्दा, ६ नदोत्रा, ७ आनन्दी, ८ नन्दवर्द्धिना, (आठ)

नोट—यह आठ देवियाँ माता के पीने के लिये जल की झारी लिये खड़ी रहती है।

(ख) १ प्राण धन्या, २ प्रबुद्धा, ३ यशोधरा, ४ लक्ष्मीवती, ५ कीर्त्तिमति, ६ वसुन्धरा,

७ चित्रा, ८ स्थिता। (आठ)

नोट—ये आठ देवियाँ, माता के सामने, दर्पण लिये खड़ी रहती हैं।

(ग) १ ईला, २ स्वरा, ३ पृथ्वी, ४ पद्मावती, ५ कॉचना, ६ सीता, ७ नवमिका, ८ भद्रिका, (आठ)

नोट—ये आठ देवियॉ माता के ऊपर छत्र लिये खड़ी रहती है।

(घ) १ चित्रा, २ कनकचित्रा, ३ सूत्रामणि, ४ त्रिसरा, ये विद्युत कुमारी देवियॉ हैं। (चार)

नोट—ये चार देविया रत्नों के दीपक का उद्योत करती हैं।

(ङ) १ ह्री, २ श्री, ३ धृति, ४ वारुणी, ५ पुंडरीकणी, ६ अवसा, ७ अंबुजास्या, ८ मिश्र केसी, (आठ)

नोट—यह आठ देवियां, माता के ऊपर चवर ढोरती हैं।

(च) १ विजिया, २ वैजयती, ३ जयती ४ अपारजिता, (चार)

ये चार विद्युत कुमारी देवियों में मुख्य हैं

(छ) १ रुचिका, २ रुचि को ज्वला, ३ रुचि-

कभी, ४ रुचिकप्रभा (चार)

नोट—ये चार देवी दिक् कुमारी देवियों में प्रधान हैं, दोनों मिलकर आठ देवियाँ भगवान के जन्मोत्सव का ठाठ करती हैं।

चर्चा नं ११५ पाँच प्रकार के भागहारों का स्वरूप।

पांचभागहार (१) सर्व संक्रमण—यह सर्व से कम पहला प्रमाण है।

(२) गुण संक्रमण—पल्य के अर्ध छेदन प्रमाण में असंख्यातवें भाग (यह पहले भागहार से असंख्यात गुणा है) मात्रा है।

(३) उत्कर्षण अपकर्षण भागाहार—यह नं० २ के प्रमाण से असंख्यात गुण है।

(४) प्रवरत संक्रमण—पल्य के अर्द्धछेदन के असंख्याते भाग का आधा (ये भी नं० ३ से असंख्यात गुणा ज्यादा है) प्रमाण है।

(५) विध्यात संक्रमण—सुच्यागुलका असंख्यातवाँ भाग (यह भी नं० ४ के प्रमाण से असंख्यात गुणा है)।

चर्चा नं० ११६ पाप के ७ स्थान और अनुक्रम से अनन्त गुणे अनन्त गुणे अनुभाग के तीव्रअंश

पाप के ७ स्थान (१) न्यायपूर्वक पांचो इन्द्रियों का विषय भोग
(२) अन्यायपूर्वक पाचो इन्द्रियो का विषय भोग
(३) हिंसादि पांच पापो का सेवन।
(४) क्रोधादि चार कषाय रूप परिणाम।
(५) अज्ञानपूर्वक आचरण।
(६) ग्रहीत मिथ्यात्व का धारण,
(७) ग्रहीत मिथ्यात्व का सेवन (चारित्र)

नोट—इन सात स्थानो में अनुक्रम से उत्तरोत्तर पाप प्रकृतियो के अनुभाग अश आगे आगे अनन्त गुणे अनन्त गुणे अधिक अधिक हैं।

चर्चा नं० ११७ आवागमन की चउभंगी

चउभगी ४ (१) नित्य निगोद से जीव व्यवहार राशि मे आते रहते हैं, फिर नित्य निगोद राशि में नहीं जाते।
(२) सिद्धक्षेत्र में जीव निरन्तर जाते रहते है परन्तु वापिस संसार में नहीं आते।
(३) अलोकाकाश से न कोई जीव आता है न कोई जीव वहाँ जाता है।

(४) चारो गति से जीव आते भी हैं और उनमें वापिस जाते भी हैं।

चर्चा नं० ११८ जल के बहाव के चार भंग

जल के बहाव के भंग

(क) पद्मादिक कुण्डो से निरन्तर जल बहता रहता है, परन्तु वह जल फिर वापिस उन्हीं कुण्डों में नहीं आता।

(ख) लवणोदधि कालोदधि समुद्र में निरन्तर नदियो का जल आकर पड़ता रहता है परन्तु समुद्र का जल फिर उल्टा पृथ्वी पर बहकर नहीं जाता।

(ग) अढ़ाईद्वीप से बाहर असंख्यात समुद्रों में न कोई नदी आकर पड़ती है, न कोई समुद्र से पृथ्वी पर उल्टा पानी चढ़ता है।

(घ) पृथ्वी पर अनेक सरोवर, नदी, नाले, कुण्ड, बावड़ियों का पानी निकलता भी रहता है, नया आता भी रहता है।

चर्चा नं० ११९ पाप पुण्य के अनेक भंग

पाप पुण्य भंग

(१) एक व्यक्ति पाप करे वही एक व्यक्ति फल भोगे।

(२) अनेक व्यक्ति पाप करें दण्ड एक को भोगना पड़े, जैसे फौज किसी नगर को नष्ट करदे और वह आक्रमण भूल से हुवा है, कमांडर

को दण्ड मिलेगा।

(३) एक पाप करे, अनेक व्यक्ति फल भोगें, जैसे दशहरे के दिन देवी के स्थान पर एक व्यक्ति भैंसे को वध करे परन्तु लाखों आदमी देखने वाले अनुमोदना करने के पाप को भोगे।

(४) अनेक व्यक्ति पाप करे और अनेक व्यक्ति ही फल भोगे, जैसे सामूहिक रूप में, किसी वर्ग में, किसी जाति में, किसी नगर में, किसी कुटुम्ब में, आपस में लड़ाई हो तो सभी पाप करे, सभी भोगें।

(५) पुण्य करे और पाप लगे, जैसे गरीबों को दान करते समय भोजन की सामग्री बगैर देखे सोधे बहुत से जीव-जन्तुओं वाली यूं ही बनाले।

(६) पाप करे और पुण्य भोगे, जैसे सूअर ने मुनि महाराज की रक्षा के भाव से शेर को मार लिया परन्तु मरकर स्वर्ग में गया।

(७) पाप करे पाप ही होय, जैसे डाकू किसी के प्राण ले और धन भी लूटे तो प्राण दण्ड मिले तथा खोटी गति में जाये।

(८) पुण्य करे पुण्य ही होय, सर्व क्षेत्र में दान देय और स्वर्ग गति जाय।

नोट—यह भंग बहिरंग क्रिया की अपेक्षा मालूम

होते हैं। परन्तु परिणामों की अपेक्षा कोई भंग नहीं है, जैसे अन्तरंग के परिणामों की जाति होगी वैसा ही पुण्य या पाप होगा, वैसा ही सुख या दुख भोगना पड़ेगा।

चर्चा नं० १२० ज्योतिषी देवों का वर्णन

ज्योतिषीदेवों का वर्णन

(क) चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, तारे, ज्योतिषी देवो के ये ५ पांच भेद हैं।

(ख) सूर्य का आतप ऊपर की तरफ केवल १०० एक सौ योजन तक जाता है, परन्तु नीचे की तरफ पृथ्वी तक ८०० आठ सौ योजन सूर्य का आतप आता है।

(ग) एक ज्योतिषी विमान से दूसरे ज्योतिषी विमान का बीच का जघन्य अन्तर (फासला) एक कोस का ७ सातवां भाग मध्यम ५० पचास योजन, उत्कृष्ट १००० एक हजार योजन है।

(घ) ज्योतिषी विमान थाली के समान गोल होते हैं उसकी चौड़ाई का जितना व्यास होता है, उससे आधी मोटाई होती है।

(ङ) मेरु पर्वत से चारों तरफ ११२१ ग्यारह सौ इक्कीस योजन तक कोई भी ज्योतिषी विमान नहीं है, इससे बाहर के जो चल ज्योतिषी

विमान हैं (चलते फिरते) वह मेरु पर्वत को चारों तरफ परिक्रमा देते है, (चक्कर लगाते हैं)

(च) पृथ्वी से ७६० सात सौ नव्वे योजन तक कोई ज्योतिषी विमान नहीं है, इससे ऊपर ११० एक सौ दस योजन की मोटाई मे सर्व ज्योतिषी विमान है, फिर ६०० नौ सौ योजन से ऊपर पहले स्वर्ग तक कोई ज्योतिषी विमान नहीं है।

चर्चा नं० १२१ मानुषोत्तर पर्वत से आगे आधे पुष्कर द्वीप में १२६४ चन्द्रमा और १२६४ सूर्य हैं।

मानुषोत्तर से बाहर आधे पुष्कर द्वीप के चन्द्रमा तथा सूर्य

(क) मानुषोत्तर पर्वत से बाहर पुष्करवर समुद्र तक, आधे पुष्कर द्वीप की चौडाई ८ आठ लाख योजन है, मानुषोत्तर पर्वत से ५० पचास हजार योजन तक तो १४४ चन्द्रमा, १४४ सूर्य है जिनका प्रकाश मानुषोत्तर पर्वत से ५० हजार योजन अन्दर की तरफ पड़ता है, और पचास हजार योजन बाहर को तरफ पड़ता है, इससे आगे हर एक लाख योजन के फासले मे ४ चार चन्द्रमा और ४ सूर्य

बढते चले जाते हैं जिसकी विले विले वार, (क्षेत्र इकाई) तफसील इस प्रकार है।
१४४. १४८ १५२. १५६. १६०
१६४ १६८. १७२ कुल १२६४ हुव।

(ख) पुष्कर समुद्र के ३२ विले (इकाई क्षेत्र) है, वारुणी समुद्र के ६४ विले (क्षेत्र इकाई) हैं, इस तरह समुद्र के आगे द्वीप और द्वीप के आगे समुद्र अन्त के स्वयभूरमण समुद्र तक गणना गिनती में असख्यात है, ऊपर लिखे कायदे मूजिब हर एक लाख योजन के क्षेत्र में ४ चार चन्द्रमा ४ चार सूर्य बढ़ते चले जाते हैं जैसे १७२ के आगे १७६ आदि मानुषोत्तर के आगे जितने भी चन्द्रमा और सूर्य हैं, वह अचल हैं, चक्कर नहीं लगाते और उनका कभी राहु और केतु के विमानों के कारण ग्रहण नहीं होता, वहाँ दिन रात का भेद भी नहीं होता चन्द्रमा के आगे सूर्य और सूर्य के आगे चन्द्रमा इस क्रम से मोतियों की माला की तरह ज्योतिष मंडल मे फैल रहे हैं एक चन्द्रमा का परिवार जम्बूद्वीप के समान जानना।

चर्चा नं० १२२, ८८ ग्रहों के नाम

८८ ग्रहो के नाम — १ काल विकाल, २ लोहित, ३ कनक, ४ कनक-संस्थान, ५ अन्तरद, ६ कवचय, ७ दुन्दुभि, ८ रूपनिर्मास, ९ नील, १० रत्नभि, ११ नीलामास, १२ अश्व, १३ अश्वस्थान, १४ कोम, १५ कंसवर्ण, १६ कंम, १७ शख, १८ परिमाण, १९ शंखवर्ण, २० उदय, २१ पचवर्ण, २२ तिल, २३ तिलपुछ, २४ चाररामि, २५ धूम, २६ धूमकेतु, २७ एक स्थान, २८ अक्ष, २९ कलिवर, ३० विकट, ३१ अभिन्नसन्धि, ३२ ग्रथ, ३३ मान, ३४ चतुष्पाद, ३५ विद्यु जिह्व, ३६ नभ, ३७ सहस, ३८ निलय, ३९ काल, ४० काल केतु, ४१ अनय, ४२ सिहायु, ४३ विपुल, ४४ काल, ४५ महाकाल, ४६ रुद्र, ४७ महारुद्र, ४८ सन्तान, ४९ सम्भव, ५० सर्वार्थ, ५१ दिस, ५२ संता, ५३ वस्तुन, ५४ निश्चल, ५५ प्रभलंभ, ५६ निरम्मम, ५७ जोति समान, ५८ स्वयप्रभस्वर, ५९ बृहस्पति, ६० विरल, ६१ निरदुख, ६२ वीतसोक, ६३ सीमकर, ६४ चेमकर, ६५ अभयकर, ६६ विजय, ६७ वैजयंत, ६८ जयत, ६९ अपराजित, ७० विमल, ७१ त्रस्त, ७२ विजयष्णु, ७३ विकस, ७४ करिकाष्ट, ७५ एकजटि,

७६ अग्नि ज्वाला, ७७ जलकेतु, ७८ केतु, ७९ क्षीरस, ८० अघ, ८१ श्रवण, ८२ राहु, ८३ महाग्रह, ८४ भावग्रह, ८५ मंगल, ८६ शनिश्चर, ८७ बुध, ८८ शुक्र ।

चर्चा नं० १२३, २८ नक्षत्रों का वर्णन

(क) नं०	नक्षत्रों के नाम	स्वामी देव	तारे	आकार
१.	कृतिका	अग्नि	६	पंखा
२.	रोहणी	प्रजापति	५	गाड़ी
३.	मृगसिर	सोम	३	ऊद्धिका (ऊपर को मुँह किये)
४.	आद्रा	रूद्रा	१	हिरण का मस्तक
५	पुनर्वसु	दिति	४	दीपक
६.	पुष्प	देवमैत्री	३	तोरण
७.	अश्लेखा	सर्प	६	छत्र
८.	मघा	पिता	५	बवई (सांप की)
९	पूर्वा फाल्गुणी	भाग	२	गऊ का मूत्र
१०.	उत्तरा फाल्गुणी	अर्यमा	२	नारीका जोड़ा (स्त्री)
११.	हस्त	दिनकर	५	हाथ
१२.	चित्रा	त्वष्टा	१	कमल
१३.	स्वाति	अनिल	१	दीपक
१४.	विसाखा	इन्द्राद्गिन	४	अहारणं

न०	नक्षत्रो के नाम	स्वामीदेव	तारे	आकार
१५.	अनुराधा	मित्र	४	उत्कृष्टहार
१६.	जेष्ठा	इन्द्र	३	हिरण की सींग
१७.	मूल	नैऋति	११	बिच्छु
१८.	पूर्वाषाढ़	जल	२	जोगी बाजडा
१९	उत्तराषाढ	विश्व	२	सिह का कुम्भ स्थल
२०.	अभिजित	ब्रह्मा	३	हस्तीका कुम्भ स्थल
२१.	श्रवण	विष्णु	३	मृदग
२२.	धनिष्ठा	वसु	५	पड़दा पखी
२३.	सतभिखा	वरुण	१००	मैना
२४.	पूर्वाभाद्रपद	अजैयक	२	हस्ती का अगला शरीर
२५.	उत्तराभाद्रपद	अहि (सर्प)	२	हस्ती का पिछला शरीर
२६.	रेवती	पूषा	३२	नाव
२७.	अश्वनी	अश्विनीकुमार	३	घोड़ा का मस्तक
२८.	भरणी	यम	३	चूल्हा का पत्थर

(ख) हरेक नक्षत्र के जितने जितने तारे लिखे है उनको ११११ मे गुणा करने पर जो गुणनफल आवे वह उस नक्षत्र के परिवार तारे है, जैसे घने नक्षत्र के ६ तारे है, ६ को ११११ में गुणा करने पर ६६६६ परिवार तारे बैठे, इसी तरह हरेक नक्षत्र की मुख्य तारा राशि को ११११ में गुणा करने से

तारों की परिवार राशि आती है।

(ग) ज्योतिषी देवों में देव, देवांगना अर्थात् स्त्री पुरुष दो लिंग होते हैं, (नपुंसक लिंग नहीं होता)।

(घ) ज्योतिषी देवो में १ इन्द्र, २ सामानिक, ३ पारिशद, ४ आत्म रक्ष, ५ अनीक, ६ प्रकीर्णक, ७ अभियोग, ८ किलविश ये आठ वर्ग (दर्जे) ही होते हैं, (त्रायस, त्रिंशत और लोकपाल ये दो दर्जे नहीं होते)।

चर्चा नं० १२४ व्यन्तर देवों का वर्णन

(क) व्यन्तर देव कुल ८ हैं—

१ किन्नर, २ किमपुरुष, ३ महोरघ, ४ गन्धर्व, ५ यक्ष, ६ राक्षस, ७ भूत, ८ पिशाच।

(ख) व्यन्तर देवों में देव देवागना दो ही लिंग होते हैं।

(ग) हरेक कुल में दो इन्द्र, दो प्रतिइन्द्र होते हैं।

(घ) इन्द्र की सात सेनाएँ होती हैं।

१ हाथी, २ घोड़ा, ३ रथ, ४ प्यादा, ५ वृषभ (बैल), ६ गंधर्व, ७ नृत्यकी।

(ङ) इन्द्र की राजधानी एक लाख योजन के व्यास वाली जम्बूद्वीप समान होती हैं, उसके साथ इसी विस्तार वाले चार और विशाल नगर होते हैं, वह राजधानी जिसमें स्थित है उन द्वीपों के आगे के नाम अगले वर्णन में दिये हैं।

(च) ज्योतिषी देवों के प्रमाण में ८१००० हजार करोड़ का भाग

देने पर जो लब्ध राशि आवे वह राशि व्यन्तर देवों की राशि प्रमाण है।

(छ) व्यन्तर देवों के भिन्न विषयों का वर्णन—

कुल के नाम	कुल के अन्तर भेद	कुल के २ इन्द्र	इन्द्र की ४ देवियाँ	राजधानी का १ द्वीप
१ किन्नर	(१) हृदय	(१) किंपुरुष	(१) अवतंसा	अंजनक
			(२) केतुमति	
	(२) गमक	(२) किन्नर	(१) रतिपिया	
	(३) रूपपाली		(२) रतिप्रिया	
	(४) किन्नर			
	(५) किनर			
	(६) अनन्द्रित			
	(७) मनोरम			
	(८) किनरोत्तम			
	(९) रतिप्रभ			
	(१०) ज्येष्ठा			
२ किंमपुरुष	(१) पुरुष	(१) सत्य पुरुष	(१) राहणि	यक्षघातुक
			(२) नवमी	(२)
	(२) पुरुषोत्तम	(२) महापुरुष	१-ह्रीं २-पुष्पवती	
	(३) सत्य पुरुष			
	(४) महापुरुष			
	(५) पुरुष प्रभु			
	(६) अति पुरुष			

कुल के नाम	कुल के उत्तर भेद	कुल के २ इन्द्र	इन्द्र की ४ देवियाँ	राजधानी का १ द्वीप
	(७) मरू			
	(८) थूंभा			
	(९) यसम्वान			
३ महोरघ	(१) भुजंग	(१) महाकाय	(१) भोगा	(३) सुवर्ण
			(२) भोगवति	
	(२) भुजंगशालि	(२) अतिकाय	(१) पुष्पगंधा	
			(२) अनिंदिता	
	(३) महाकाय			
	(४) अतिकाय			
	(५) अस्कंघशाल			
	(६) मनोहर			
	(७) असंजव			
	(८) महेशवर्य			
	(९) गम्भीर			
	(१०) प्रियदर्शी			
४ गंधर्व	(१) हाहा	१ गीतरति	१ सरस्वति	मनसिलक
			२ सुवरसैना	४
	(२) हूहू	२ गीतजसा	१ नंदनी	
	(३) नारद		२ प्रियदर्शना	
	(४) तुंमवर			

कुल के नाम	कुल के उत्तर भेद	कुल के २ इन्द्र	इन्द्र की ४ देवियाँ		राजधानी का १ द्वीप
	(५) कदंब				
	(६) वासव				
	(७) महासुर				
	(८) गीतरति				
	(९) गीतजस				
	(१०) दैवत				
५ यक्ष	(१) मणिभद्र	मणिभद्र १	कुन्दा १	बहु पुत्रा २	वज्र ५
	(२) पूर्णभद्र	२ पूर्णभद्र	तारा (१)	उत्तमा (२)	
	(३) शैलभद्र				
	(४) मनोभद्र				
	(५) भद्र				
	(६) सुभद्र				
	(७) मानुष				
	(८) धनपाल				
	(९) सरूपयक्ष				
	(१०) यक्षोत्तम				
	(११) मनोहर				
६ राक्षस	(१) भीम	(१) भीम	पद्मा (१)	वसुमित्रा (२)	रक्षस (६)

कुल के नाम	कुल के उत्तर भेद	कुल के २ इन्द्र	इन्द्र की ४ देवियाँ	राजधानी का १ द्वीप
	(२) महाभीम	महाभीम (२)	रत्नाख्या (२) कनकप्रभा (२)	
	(३) विघ्ननायक			
	(४) उदक			
	(५) राक्षस			
	(६) ब्रह्म राक्षस			
	(७) भेद			
७ भूत	(१) सरूप	(१) सरूप	रूपवति (१) बहूरूपा (२)	हिंगुलक (७)
	(२) प्रतिरूप	(२) अतिरूप	(२)सुसीमा (१)सुमुखा	
	(३) भूत्तोतम			
	(४) प्रतिभूत			
	(५) महाभूत			
	(६) प्रतिछन्न			
	(७) आकाश भूत			
८ पिशाच	(१) कुशमाड	काल (१)	कमला (१) कमलप्रभा (२)	हड़ताल (८)
		महाकाल (२)	उतपला (१) सुदर्शना (२)	
	(२) रक्षत			

कुल के नाम	कुल के उत्तर भेद	कुल के २ इन्द्र	इन्द्र की ४ देवियाँ	राजधानी का १ द्वीप
	(३) यक्ष			
	(४) सम्मोह			
	(५) तारक			
	(६) अशुचि			
	(७) काल			
	(८) महाकाल			
	(९) शुचि			
	(१०) सतालक			
	(११) देह			
	(१२) महादेह			
	(१३) तुष्णीक			
	(१४) परवचन			

नोट—दो दो इन्द्रों में पहला पहला इन्द्र दक्षिण दिशा में रहता है, और दूसरा दूसरा इन्द्र उत्तर दिशा में रहता है, हरेक इन्द्र की जो नृत्यकी सेनायें हैं, उनके ऊपर एक इन्द्र के दो दो मुख्य, गणिका महितरी (मुख्यनाटिका) होती हैं, उनके स्थान इन्द्र की राजधानी से बाहर होते हैं।

चर्चा नं० १२५ भवनवासीदेव

भवन (क) भवनवासी देवों के १० कुल हैं—

भवनवासीदेव 　१ असुरकुमार, २ नागकुमार, ३ स्वर्णकुमार, ४ द्वीपकुमार, ५ उदधिकुमार, ६ विद्युतकुमार, ७ स्तनितकुमार, ८ दिक्कुमार, ९ अग्नि-कुमार, १० वातकुमार।

(ख) असुरकुमार देवों की ७ प्रकार की सेना होती है, १ भैंसा, २ घोड़ा, ३ रथ, ४ हाथी, ५ प्यादा, ६ गंधर्व, ७ नृत्यकी।

(ग) नागकुमार देवों की सेना ७ प्रकार की होती है। १ सर्प, २ गरुड़, ३ हाथी मातलो (मस्ताना), ४ ऊँट, ५ सूअर, ६ सिंह, ७ पालकी।

चर्चा नं० १२६ कल्पवासी व कल्पातीत देव

कल्पवासी (क) कल्पवासी देवों के नाम—

कल्पातीतदेव 　१ सौधर्म, २ ईशान, ३ सनत्कुमार, ४ महेन्द्र, ५ ब्रह्म, ६ ब्रह्मोत्तर, ७ लांतव, ८ कापिष्ठ, ९ शुक्र, १० महाशुक्र, ११ शतार, १२ सहस्रार, १३ आनत, १४ प्राणत, १५ आरण, १६ अच्युत।

(ख) कल्पवासी देवों के वाहन (सवारी) हंस, चकवा, गरुड़, मछली (मच्छ) मोर, कमल, पुष्पक विमान।

नोट—इन विमानों पर सवार होकर कार्तिक, फाल्गुन, आषाढ़ की अष्टान्हिका पर्व में देव

लोग, नन्दीश्वरद्वीप जाकर कल्पवृक्षो के अष्ट द्रव्य लेकर अनुपम रत्नमई आभूषण पहन कर ५२ चैत्यालय की पूजन करते हैं दोपहर तक पूर्व के चैत्यालयों की, दोपहर तक दक्षिण के चैत्यालयो की, दोपहर तक पश्चिम के चैत्यालयो की, दोपहर उत्तर के चैत्यालयों की और भी भवनवासी आदि अनेक देव इस पूजन महोत्सव से पुण्य प्राप्त करते है, देवगति मे दान तप शील व्रत यह धर्म वैक्रियक शरीर होने के कारण नहीं बनता है, पूजन मे ही असीम पुण्य प्राप्त होता है ।

चर्चा नं० १२७ इन्द्रों के नाम परिवार

इन्द्रों के परिवार (क) कल्पवासी व भवनवासी दस प्रकार का इन्द्रों का परिवार होता है ।

१. इन्द्र प्रति इन्द्र—(राजा)
२. लोकपाल—(कोटपाल)
३ त्रायस्त्रिंसत—(राजा के पुत्र)
४. सामान्य—(राजा का बराबर की पदवी वाले परिवार के पूज्य पुरुष
५. आत्म रक्ष—(अंग रक्षक)
६. पारिशद—(सफा के मेम्बर)

नोट—इन्द्र की तीन सभा होती हैं। जैसे यहाँ लोकसभा, राज्यसभा, मंत्री मंडल है।

७. अनीक—फौज (सेना)

८. प्रकीर्णक—(प्रजा)

९ अभियोग—(नौकर चाकर आदि)

१०. किलबिश—(मदभागी जो इन्द्र की राजधानी से बाहर रहते हैं)

(ख) ज्योतिषी और व्यंतर देवों में त्रायस्त्रिंशत और लोकपाल ये दो परिवार नहीं होते, इन्द्रों के शेष आठ तरह का परिवार होता है।

चर्चा नं० १२८ कल्पवासी और कल्पातीत देवलोक के ६३ पटलों के नाम

पहले युगल के ३१ पटलों के नाम—

देवों के ६३ पटल

१. ऋतु, २. विमल, ३. चन्द्र, ४. बल्गु, ५. वीर, ६ अरुण, ७. नन्दन, ८. नलिन, ९ कंचन, १० रोहित, ११ चंचत, १२. मरुत, १३. ऋद्धीश १४. वैडूर्य, १५. रुचिक, १६. रुचक, १७ अंक, १८. स्फुटिक, १९. तपनीय, २०. मेघ, २१. अभ्र, २२. हरिद्र, २३. पद्ममाल, २४ लोहित, २५. बज्र, २६. नद्यावत २७ प्रभंकर, २८. पृष्ठक, २९. गज, ३०. मित्र ३१. प्रभ।

दूसरे युगल के ७ पटलों के नाम—

देवों के ६३ पटल १. अंजन. २ वनमाल, ३ नाग, ४. गरुड़, ५. लागल, ६. बलभद्र, ७. चक्र।

तीसरे युगल के ४ पटलों के नाम—

१. अरिष्ट, २. सुरसमिति, ३ ब्रह्म, ४. ब्रह्मोत्तर।

चौथे युगल के २ पटलों के नाम—

१. ब्रह्म हृदय, २. लांतव।

पांचवें युगल के १ पटल का नाम—

१. महाशुक्र।

छठे युगल के १ पटल का नाम—

१ सहस्रार

सातवें युगल के ३ पटलों के नाम

१. आनत, २ प्रानत, ३. पुष्पक।

आठवें युगल के ३ पटलों के नाम

१. शातक, २. आरण, ३ अच्युत।

नौग्रैविक के ९ पटलों के नाम—

१. सुदर्शन, २ अमोघ, ३. सुप्रबध, ४. यशोधर, ५. सुभद्रनाम, ६. विशाल, ७. सुमनस, ८. सौमनस, ९. प्रियतकर।

नौ अनुदिश के १ पटल का नाम—

१. आदित्य।

पांच पंचोत्तर के १ पटल का नाम—

१. सर्वार्थसिद्धि।

नोट—(क) नव अनुदिश के विमानों के नाम १ अर्चि, २ अर्चिमालिनी, ३. वैर, ४ वैरोचन, ये चार विमान पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर में अनुक्रम से स्थित है, १ सोम, २ रूप, ३ अक, ४ स्फुटिक ये चार विमान १ आग्नेय, २ नैरृत, ३ वायव, ४ ईशान अनुकम से चार दिशाओं में स्थित हैं। आदित्य सर्व के बीच मे स्थित है।

(जैसे एक थाली में ६ आम रखे हों)

(ख) १ विजय, वैजयंत, ३ जैयत, ४ अपराजित, ये चार विमान अनुक्रम से पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर चार दिशाओं में स्थित हैं, सर्वार्थसिद्धि विमान सर्व के बीच में इन्द्रक विमान कहलाता है, यहाँ के अहिमिद्र अगले भव में ही मोक्ष चले जाते हैं, (जैसे चौपड़ का आकार)

चर्चा नं० १२६ चौरासी योग

चौरासी योग (क) लब्धि अपर्याप्त के तीन भेद—

(१) लब्धि अपर्याप्त जीवों की आयु एक श्वांस के के अठारहवें भाग होती है, उसके तीन भाग में से पहले भाग को उपपाद योग कहते है।

(२) द्वितीय भाग के प्रारम्भ से द्वितीय भाग के अन्त तक एकान्त वृद्धि योग कहलाता है, इसमें समय समय अविभाग प्रतिछेद की बढ़वारी होती है।

(३) अन्त के तीसरे भाग को परिणाम योग कहते है।

(ख) पर्याप्त जीव के तीन योग—

(१) जिन जीवों की पर्याप्त पूरी होने वाली है, उनके अपर्याप्त अवस्था के पहले समय के योग को उपपाद योग कहते हैं।

(२) पहले समय के परिणाम के बाद शरीर पर्याप्त पूरी न होजाय वहाँ तक बीच के सब काल को एकान्त वृद्धि योग कहते हैं, इसमें समय समय अविभाग प्रतिछेदों की बढ़वारी होती रहती है।

(३) पर्याप्त पूरी होने के बाद आयु के अन्त समय तक परिणाम योग होता है, इसमें किसी समय में अविभाग प्रतिछेद घटता है कभी बढ़ता है।

(ग) तीन भेद। (क) के तीन भेद, (ख) के योगों की जघन्य और उत्कृष्ट अवस्था होती है, इस तरह से बारह योग बन गये।

(घ) १ एकेन्द्रिय सूक्ष्म और १ एकेन्द्रिय बादर, ३ विकलेन्द्रिय, १ असञ्ज्ञी, १ सञ्ज्ञी इन सात जीव समासों को (ग) में लिखे १२ योगों से गुणा करने पर ८४ भेद बन गये।

चर्चा नं० १३० भगवान की माता के १६ स्वप्न

सोलह स्वप्न नोट—गर्भकल्याणक के समय भगवान की माता को प्रात काल जो सोलह स्वप्न आते हैं उनके नाम इस तरह हैं।

नं०	स्वप्न नाम	स्वप्न का फल
१	ऐरावत हाथी	पुत्र का जन्म होगा
२.	वृषभ	तीन लोक का स्वामी पुत्र होगा।
३.	सिंह	अनन्त बलि होगा
४	पुष्पों की माला	धर्म प्रगट करने वाला
५.	लक्ष्मी	सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक होगा
६.	पूर्णमासी का चन्द्रमा	सर्व जीवों को आनन्द देने वाला
७	सूर्य	प्रभावान तेजस्वी
८	दो घड़े	निधि का भोगने वाला
९	मछली का जोड़ा	सुख भोगने वाला
१०	सरोवर	शरीर मे १००८ शुभ लक्षण
११.	समुद्र	केवलज्ञान प्राप्त करना
१२	सिंहासन	विशाल राज्य का भोगना
१३.	स्वर्ग विमान	स्वर्ग लोक से आकर जन्म लेगा
१४.	धरणेन्द्रभवन	अवधिज्ञानी होगा।
१५	रत्नराशि	गुणो की खान होगा
१६.	निर्धूम अग्नि	कर्मों को नष्ट करके मोक्ष जायेगा

चर्चा नं० १३१ वर्त्तमान चौबीस तीर्थंकरों का वर्णन

नं०	नाम	ऊँचाई शरीर	दाये पैर के तलवे मुख चिन्ह	शरीर का रंग (वर्ण)	विवाह	जन्म का वंश	आयु
१	वृषभनाथ	५०० (धनुष)	बैल	स्वर्ण	हुआ	इक्ष्वाक	८४ लाखपूर्व
२	अजितनाथ	४५० ,,	हाथी	,,	,,	,,	७२ ,,
३	सम्भवनाथ	४०० ,,	घोड़ा	,,	,,	,,	६० ,,
४	अभिनन्दननाथ	३५० ,,	बन्दर	,,	,,	,,	५० ,,
५	सुमतिनाथ	३०० ,,	चकवा	,,	,,	,,	४० ,,
६	पद्मप्रभु	२५० ,,	कमल	रक्त (लाल)	,,	,,	३० ,,
७	सुपार्श्वनाथ	२०० ,,	सांथिया	नीला	,,	,,	२० ,,
८	चन्द्रप्रभु	१५० ,,	चन्द्रमा	श्वेत सफेद	,,	,,	१० ,,
९	पुष्पदंत	१०० ,,	मगरमच्छ	श्वेत	,,	,,	६ ,,
१०	शीतलनाथ	९० ,,	कल्प वृक्ष	स्वर्ण	,,	,,	१ ,,
११	श्रेयांसनाथ	८० ,,	गैंडा	स्वर्ण	,,	,,	८४ लाख वर्ष
१२	वासपूज्य	७० ,,	भैंसा	रक्त (लाल)	बाल ब्रह्मचारी	,,	७२ लाख वर्ष
१३	विमलनाथ	६० ,,	सूअर	स्वर्ण	विवाह हुआ	,,	६० लाख वर्ष

नं०	नाम	ऊँचाई शरीर	दाये पैर के तलवे के मुख चिन्ह	शरीर का रंग वर्ण	विमान	जन्म का वंश	आयु
१४	अनंतनाथ	५० धनुष	सेह	स्वर्ण	विवाह हुआ	इक्ष्वाकवंश	३० लाख वर्ष
१५	धर्मनाथ	४५ ,,	वज्र	स्वर्ण	,,	कुरुवंश	१० लाख वर्ष
१६	शान्तिनाथ	४० ,,	मृग	स्वर्ण	,,	,,	१ लाख वर्ष
१७	कुन्थनाथ	३५ ,,	बकरा	स्वर्ण	,,	,,	९५ हजार वर्ष
१८	अरहनाथ	३० ,,	मछली	स्वर्ण	,,	,,	८४ हजार वर्ष
१९	मल्लिनाथ	२५ ,,	कलश	स्वर्ण	बालब्रह्मचारी	इक्ष्वाकवंश	५५ हजार वर्ष
२०	मुनिसुव्रतनाथ	२० ,,	कछुवा	श्याम	वि० हुवा	हरिवंश	३० हजार वर्ष
२१	नमिनाथ	१५ ,,	नीलकमल	स्वर्ण	,,	इक्ष्वाकवंश	१० हजार वर्ष
२२	नेमनाथ	१० ,,	शंख	श्याम	बालब्रह्मचारी	हरिवंश	१ हजार वर्ष
२३	पार्श्वनाथ	९ हाथ	सर्प	नील	,,	उग्रवंश	१०० वर्ष
२४	वर्द्धमान (महावीर)	७ हाथ	सिंह (शेर)	स्वर्ण	,,	नाथवंश	७२ वर्ष

चर्चा नं० १३२ विदेह क्षेत्र के २० विहरमान तीर्थंकरों के नाम

विदेह क्षेत्र के २० तीर्थंकर	१ श्रीमंदरजी, २ युगमंदरजी, ३ बाहुजी, ४ सुबाहु जी, ५ सजातकजी, ६ स्वयप्रभजी, ७ वृषभाननजी, ८ अनन्तवीर्यजी, ९ सूर्यप्रभुजी, १० विशालकीर्ति जी, ११ वज्रधरजी, १२ चन्द्राननजी, १३ चन्द्र-बाहुजी, १४ भुजगमजी, १५ ईश्वरजी, १६ नेमि-श्वरजी, १७ वीरसेनजी, १८ महाभद्रजी १९ देव-यशजी, २० अजितवीर्यजी।

चर्चा नं० १३३, १२ चक्रवर्तियों का वर्णन

१२ चक्रवर्तियों का वर्णन

(क) चार प्रकार की सेना—

१ हाथी चौरासी लाख, २ रथ चौरासी लाख, ३ घोड़े १८ करोड़, ४ प्यादे ८४ करोड़।

(ख) चौदह रत्न उपजने के स्थान—

नगर में ४:—१ सेनापति, २ ग्रहपति, ३ शिल्पकार, ४ पुरोहित होते हैं।

तीन विजयार्द्ध पर्वत—१ हाथी, २ घोड़ा, ३ स्त्री।

नोट—यह सात चेतन रत्न कहलाते हैं।

श्री देवी के तीन स्थान—१ काकणी रत्न,

२ चूड़ामणि रत्न, ३ चर्म रत्न।

आयुधशाला ४—१ खडग, २ छत्र, ३ दण्ड, ४ चक्र।

नोट—ये सात अचेतन रत्न कहलाते हैं।

(ग) नौ निधियों के नाम—

(१) कालनिधि—पुस्तक देती है।

(२) महाकाल निधि से असि, मषि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प सम्बंधी वस्तुए मिलती हैं।

(३) नयसर्प से बर्तन मिलते हैं।

(४) पांडुक से सर्व प्रकार के रस तथा धान मिलते हैं।

(५) पद्म से सर्व प्रकार के वस्त्र मिलते हैं।

(६) माणवक से सर्व प्रकार के आयुध मिलते हैं।

(७) पिंगल से सर्व प्रकार के आभूषण मिलते हैं।

(८) शंख से सर्व प्रकार के बाजे मिलते हैं।

(९) सर्व रत्न से सर्व प्रकार के रत्न मिलते हैं।

नोट—इन निधियों के आठ आठ पहिये होते हैं, आठ योजन ऊँची होती हैं, नौ योजन चौड़ी चौकोर होती है।

(घ) चक्रवर्ती—भिन्न भिन्न अवस्थाओं का कोठा—

चक्रवर्तियों के नाम	शरीर का रंग	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर किस गति में जाना
१. भरत	स्वर्ण	५०० धनुष	८४ लाख पूर्व	मुक्ति गये
२ सगर	,,	४५० धनुष	७२ लाख पूर्व	,,
३. मघवान	,,	४२३ धनुष	५० लाख पूर्व	स्वर्ग गये
४. सनत्कुमार	,,	४० धनुष	३ लाख वर्ष	,,
५. शान्तिनाथ	,,	४० धनुष	१ लाख वर्ष	मुक्ति गये
६. कुन्थनाथ	,,	३५ धनुष	६५ हजार वर्ष	,,
७. अरहनाथ	,,	३० धनुष	८४ हजार वर्ष	,,
८. सुभौम	,,	२८ धनुष	६० हजार वर्ष	७ वे नरक
९. महापद्म	,,	२२ धनुष	३० हजार वर्ष	मुक्ति गये
१०. हरिषेण	,,	२० धनुष	१० हजार वर्ष	,,
११. जय	,,	१५ धनुष	३ हजार वर्ष	,,
१२ ब्रह्मदत्त	,,		७ सौ वर्ष	७ वें नर्क

चर्चा नं० १३४ नौ नारायणों का वर्णन

(क) नारायण के सात आयुध होते है जो देवों पुनीत हैं।

१ खड्ग, २ सख, ३ धनुष, ४ चक्र, ५ मणि, ६ शक्ति, ७ गदा।

(ख) भिन्न भिन्न नौ नारायणों के विषयों का कोठा।

नं०	नाम	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर जिस गति में गया।
१.	त्रिपिष्ट	८० धनुष	८४ लाख वर्ष	७ वें नर्क
२.	द्विपिष्ट	७० धनुष	७२ लाख वर्ष	६ वें नर्क
३.	स्वयंभू	६० धनुष	६० लाख वर्ष	६ वें नर्क
४.	पुरुषोत्तम	५० धनुष	३० लाख वर्ष	६ वे नर्क
५	पुरुषसिंह	४५ धनुष	१० लाख वर्ष	६ वें नर्क
६.	पुरुष पुंडरीक	२९ धनुष	६५ हजार ,,	६ वें नर्क
७.	पुरुषदत्त	२२ धनुष	३२ हजार ,,	५ वे नर्क
८.	लक्ष्मण	१६ धनुष	१२ हजार ,,	४ नर्क
९.	कृष्ण	१० धनुष	१ हजार ,,	३ नर्क

चर्चा नं० १३५, ९ बलभद्रों का वर्णन—

(क) बलभद्रों के देवों पुनीत चार आयुध होते हैं।

१ रत्नों की माला. २. हल, ३. मूसल, ४. गदा।

(ख) इनकी भिन्न भिन्न अवस्थाओं का कोठा—

नं०	नाम	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर गति वर्णन
१	विजय	८० धनुष	८७ लाख वर्ष	मोक्ष गये
२	अचल	७० धनुष	७७ लाख वर्ष	,,
३	सुधर्म	६० धनुष	६७ ,,	,,
४	सौपर्व	५० धनुष	३७ ,,	,,

५	सुदर्शन	४५ धनुष	१७ लाख वर्ष	मोक्ष गये
६	नंदी	३६ धनुष	६७ ,,	,,
७	नदी मित्र	२२ धनुष	३७ ,,	,,
८	रामचन्द्र	१६ धनुष	१७ ,,	,,
९	पद्म	१० धनुष	१२ सौ वर्ष	स्वर्ग गया

चर्चा नं० १३६ नौ प्रतिनारायण का वर्णन

(क) पहले तीन प्रतिनारायण विद्याधर थे। अन्त के छह भूमगोचरी थे।

(ख) इनके भिन्न भिन्न विषयों का कोठा।

नं०	नाम	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर गति वर्णन
१.	अश्वग्रीव	८० धनुष	८४ लाख वर्ष	७ वां नरक
२.	तारक	७० धनुष	७२ लाख वर्ष	६ वा नरक
३.	मेरूक	६० धनुष	६० लाख वर्ष	६ वां नरक
४.	निश्रुण	५० धनुप	३० लाख वर्ष	६ वां नरक
५	मधुकेटव	४५ धनुप	१० लाख वर्ष	६ वां नरक
६.	बलि	३६ धनुष	६५ हजार वर्ष	६ वा नरक
७.	अपहरण	२२ धनुष	३२ हजार वर्ष	५ वां नरक
८.	रावण	१६ धनुष	१२ हजार वर्ष	४ वां नरक
९.	जरासिंध	१० धनुष	१ हजार वर्ष	३ रा नरक

चर्चा नं० १३७ चौदह कुलकरों का वर्णन

न० नाम	शरीर का रंग	शरीर की ऊँचाई	समय राज दंड
१ प्रतिश्रुति	स्वर्ण	१८०० धनुष	हाय हाय बुरा किया
२ सन्मति	,,	१३०० धनुष	,,
३ क्षेमंकर	,,	८०० ,,	,,
४ क्षेमधर	,,	७७५ ,,	,,
५ सीमकर	,,	७५० ,,	,,
६ सीमधर	,,	७२५ ,,	हाय हाय मति करो
७ विमलवाहन	,,	७०० ,,	,,
८ चक्षुष्मान	श्याम	६७५ ,,	,,
९ यशस्वान	स्वर्ण	६५० ,,	,,
१० अभिचंद्र	सफेद	६२५ ,,	,,
११ चन्द्राभ	स्वर्ण	६०० ,,	हाय यह मति करो
१२ मरूदेव	सफेद	५७५ ,,	,,
१३ प्रसेनजीत	स्वर्ण	५५० ,,	,,
१४ नाभिराज	स्वर्ण	५२५ ,,	,,

नोट—१ आयु का वर्णन पृष्ठ १७५ के नोट से देख लेना।

२. उनके समय परिवर्तन कार्य का वर्णन भी पृष्ठ १७५ के नोट से जान लेना।

नोट—(क) पल्य को दस भागाहार से भाग देने पर जो लब्धि राशि आवे उतनी आयु पहले कुलकर की है।

(ख) आगे पल्य में जिन भागाहार राशियों का भाग देकर लब्धराशि निकालेंगे वह भागाहार राशि आगे २ दस दस गुणी होती चली जायगी भागाहार का अंक राशि का वर्णन जानना।

चौदह कुलकर वर्णन

नं० भागाहार राशि	अङ्क
(१)	१०
(२)	१००
(३)	१०००
(४)	१००००
(५)	१०००००
(६)	१००००००
(७)	१०००००००
(८)	१००००००००
(९)	१०००००००००
(१०)	१००००००००००
(११)	१००००००००००००
(१२)	१०००००००००००००
(१३)	१००००००००००००००
(१४)	१०००००००००००००००

नोट—जिस नम्बर के कुलकर की आयु मालूम करनी हो तो पल्य में उसी नम्बर भागाहार राशि का भाग देने पर जो लब्ध राशि आवे वह उस नम्बर के कुलकर की आयु जानना।

(ग) एक कुलकर से दूसरा कुलकर कितने समय के बाद पैदा हुवा यह अन्तराल मालूम करने के लिये भी पल्य में अन्तराल भागाहार राशि का भाग देने से जो लब्ध राशि आवे वह दो कुलकर के बीच में अन्तराल समय राशि है, पहले भागाहार से भाग देने पर जो लब्ध राशि आवे वह पहले और दूसरे कुलकर के बीच में अन्तर समय राशि है, तेरह भागाहार राशि यह हैं।

नं० भागाहार	अंक
(१)	८०
(२)	८००
(३)	८०००
(४)	८००००
(५)	८०००००
(६)	८००००००
(७)	८०००००००
(८)	८००००००००
(९)	८०००००००००

(१०) ८०००००००००००

(११) ८००००००००००००

(१२) ८०००००००००००००

(१३) ८००००००००००००००

(घ) किस किस कुलकर के समय क्या २ परिवर्तन हुआ।

(१) प्रति श्रुति—भोग भूमि में ज्योतिरांग कल्प वृक्ष प्रकाश में सूर्य चन्द्रमाका प्रकाश पृथ्वी पर दिखाई नहीं देता था। इस पहले कुलकर के समय साढ़ सुदी १५ के साय काल पश्चिम से सूर्य अस्त होता और पूर्व में चन्द्रमा उदय होता देखकर प्रजा के लोग बहुत घबराये तो इन्होने समझाया कि भोग भूमि की रचना विलीन हो गई है अब करम भूमि आने वाली है यह दो ज्योतिष मडल के दोनो प्रतिइन्द्र व इन्द्र हैं, इनसे रातदिन वर्षा, धान और फलों की उत्पत्ति होगी यह भय करने की कोई बात नहीं है, यह तुम्हारे सुख के साधन हैं।

(२) सन्मति—इस दूसरे कुलकर के समय तारा मडल भी दिखलाई देने लगा उसका भय निवारण किया।

(३) क्षेमंकर—इस तीसरे कुलकर के समय तिर्यंचों में (जानवरों में) क्रूर स्वभाव पैदा हो गया सो उनका स्वभाव बताकर भय निवारण किया।

(४) क्षेमधर—इस चौथे कुलकर के समय जानवर मनुष्यों पर हमला करने लगे उन से अपनी रक्षा करने

का उपाय बतलाकर भय निवारण किया।

(५) सीमंकर—इस पांचवें कुलकर के समय कल्पवृत्तों में मेरे तेरे का भाव पैदा होकर झगड़ा पैदा होने लगा तो हरेक को हाथ से उनकी सीमा बतलाकर झगड़ा मिटाया।

(६) सीमंधर—इस छटवें कुल कर के समय कषाय बढ़ने से कल्पवृत्तों की बाबत और झगड़ा बढ़ने लगा तो हरेक के हिसाब से अधिकार की हदबन्दी स्थापित करवा कर झगड़ा मिटाया।

(७) विमलवाहन—इस सातवे कुल कर ने जल थल आकाश में चलने वाली सवारी बतलाकर वाहन क्रिया का उपदेश किया।

(८) चक्षुष्मान—अब से पहले स्त्री पुरुष के जोड़े का जन्म होने के समय ही जन्मदाता स्त्री पुरुष का जोड़ा कापूर की तरह आकाश में उड़ जाता था, एक दूसरे को पिता पुत्र का कोई ज्ञान नहीं था। अब नये जोड़े के उत्पन्न होने के बाद पुराना जोड़ा कुछ समय जीवित रहने लगा तो उनका पिता पुत्र का सम्बन्ध समझाकर भय निवारण किया।

(९) यस्वान—इन्होने बच्चों को आशीर्वाद देने तथा प्यार करने का मार्ग बतलाया।

(१०) अभिचन्द्र—इन्होंने बच्चों को खिलाना आदि

सिखलाने का मार्ग बतलाया।

(११) चन्द्राभ—माता पिता को यह समझाकर कि बच्चे तुम्हारी सेवा करेंगे इस तरह सन्तोष देकर उन्हे मार्ग पर लगाया।

(१२) मरुदेव—इन्होंने जल में तिरने की विद्या का मार्ग बतलाया।

(१३) प्रसेनजित—इनके समय में जेर में लिपटे हुए बच्चे पैदा होने लगे, जेर दूर करने का मार्ग बतलाया।

(१४) नाभिराज—इनके समय मे बच्चे की सूडी में नाभिनाल से बच्चे पैदा हाने लगे मो नाभिनाल छेदन का मार्ग बतलाया।

चर्चा नं० १३८, ११ रुद्रों का वर्णन

नं०	नाम	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर किस गति में जाना
१	भीम	५०० धनुष	८३ लाख पूर्व	सातवें नरक
२	बलि	४५० धनुष	७१ ,,	सातवे नरक
३	जितशत्रु	१०० ,,	७ ,,	छठे ,,
४	रुद्र	६० ,,	१ ,,	,, ,,
५	विशाल नैन	८० ,,	८४ लाख वर्ष	,, ,,
६	सप्रतिष्ठा	७० ,,	६० ,,	,, ,,
७	बल	६० ,,	५० ,,	,, ,,

न०	नाम	शरीर की ऊँचाई	आयु	मर कर किस गति
८	पुंडरीक	५० ,,	४० ,,	पाँचवे नरक
९	अजितयंधर	२८ ,,	२ ,,	चौथे ,,
१०	जितनाभिपीठ	२४ ,,	१ ,,	चौथे ,,
११	सत्यद्रजनय	७ हाथ	६९ वर्ष	तीसरे नरक

नोट—(क) रुद्रों का जन्म भ्रष्ट मुनि अर्जिका के संयोग से होता है, तापसी वीर्य के संस्कार के कारण यह महा पराक्रमी महातेजस्वी विद्यानुवाद नाम के दसवे पूर्व के पाठी तपस्वी महात्यागी भव्य और सम्यग्दृष्टि होते है, परन्तु पंचेन्द्रिय के विषय की तीव्र लालसा में फँस कर भ्रष्ट हो जाते हैं, परन्तु कालान्तर में इनका मोक्ष जाना निश्चित है।

चर्चा नं० १३९, ९ नारद का वर्णन

९ नारद वर्णन (क) यह नारद नारायण के समय में होते हैं। नारायण के ऊपर बहुत प्रेम रखते है बाल ब्रह्मचारी आकाश गामनि विद्या के धारी अढ़ाई द्वीप में सर्व जगह विचरने वाले होते हैं, परन्तु कलह प्रिय होने के कारण सीधे नरक में जाते हैं। मगर भव्य है इनका भी कालान्तर में मोक्ष जाना निश्चित है।

(ख) नारद का जन्म अन्यमति तापस व तापसनी के सयोग से होता है।

(ग) इनका विशेष वर्णन उत्तर पुराण आदि ग्रन्थों में विस्तार पूर्वक लिखा है।

चर्चा नं० १४०, सम्यग्दर्शन तथा व्रतों के ७० अतिचार

७० अतिचार सम्यग्दर्शन के (५)—१. शका, २. कॉक्षा, ३ विचिकित्सा, ४. अन्यदृष्टि प्रशसा, ५. अन्य दृष्टि स्तवन।

(२) अहिंसा अणुव्रत के (५)—१. बध, २. वध, ३. छेद, ४. ज्यादा बोझ लादना, ५. जलपान समय पर नहीं देना।

(३) सत्याणुव्रत ५—१. मिथ्या सिद्धान्त का उपदेश करना, २. किसी के गुप्त उपदेशों को जानकर (ताड़कर) प्रगट कर देना, ३ झूठी दस्तावेज बना लेना, ४. धरोहर रख गया हो आकर भूल से कम मागे तो उतना ही देकर चुप हो जाना, ५ किसी की गुप्त बात जानकर उसको प्रगट कर देना।

(४) अचौर्य अणुव्रत (५)—१. चोरी का उपाय बतलाना, २. चोरी का माल मोल लेना

(३) राजा के कानून के विरुद्ध चलना, (४) माप तोल कम ज्यादा रखना, (५) बढ़िया चीज में घटिया मिलाकर बेचना।

(५) ब्रह्मचर्य अणुव्रत के (५)—(१) दूसरों के ब्याह कराना, (२) दासी से संभोग करना, (३) अविवाहिता वैश्या के घर आना जाना, (४) विषय अगों के सिवाय दूसरे अंगों से क्रीड़ा करना, (५) अपनी विवाहिता स्त्री में भी तीव्र राग भाव रखना।

(६) परिग्रह परिमाण (५)—(१) शरीर, (२) जीव, (३) नाक, (४) आख, (५) कान, इन पाच इन्द्रियों के विषयो में तीव्र अनुरागी होना।

(७) दिग्व्रत के (५)

(१) चारों दिशाओं में बांधी हुई सीमाओं का क्षेत्र कम पड़ता हो परन्तु चपलता से पहाड़ के ऊपर चढ़कर जाना, (२) सुरग में उतर कर जाना, (३) तिरछे रास्ते से घूमकर जाना, (४) जरूरत पड़ने पर सीमित क्षेत्र बढ़ा लेना (५) मर्यादा की सीमा को भूल जाना।

(८) देशव्रत के (५)

१. जीवन पर्यंत के लिये जो दशो दिशाओं

की सीमा बांधी थी उसमें भी मन की चंचलता कम करने के लिये थोड़े समय के वास्ते और भी कम क्षेत्र की सीमा बांधने को देशव्रत कहते हैं, इसके ये अतिचार बताये हैं—१ सीमा से बाहर की चीज मंगवाना। २ सीमा से बाहर चीज भेजना। ३ आवाज करके सीमा से बाहर के आदमी को अपनी मौजूदगी बतलाना। ४. सीमा से बाहर के व्यक्ति को अपना रूप दिखलाना। ५ सीमा से बाहर के व्यक्ति के ऊपर ककरी आदि कोई चीज फेंककर अपनी मौजूगी प्रगट करना।

(६) अनर्थ दण्ड के (५)—

जिस कार्य में धर्म, अर्थ काम, मोक्ष कोई भी सिद्ध ना होवे वृथा पाप का फल भोगना पड़े उसको अनर्थ दण्ड कहते हैं। (१) अंग की बुरी चेष्टाए करके किसी का दिल दुखाना। (२) खोटे वचनों से किसी की हँसी दिल्लगी उड़ाना। (३) आगम विरुद्ध और भी वचन बोलना। (४) अपनी जरूरत से ज्यादा भोग उपभोग की सामग्री इकट्ठी करना। (५) हँसी ठट्ठा प्रलाप वचन।

(१०) सामायिक व्रत के (५)—

पंचइन्द्रियों के विषयों में इष्ट अनिष्ट की बुद्धि नहीं रखना यह सामायिक है. व्यवहार में तीनों समय में एकाग्र चित्त होकर आत्म चिंतवन करना यह भी सामायिक है, इसके इस तरह ५ अतिचार बतलाते हैं। १ मन की चंचलता । २ वचन की चंचलता ३. काय की चंचलता। ४. सामायिक की क्रिया में अनादर भाव। ५. सामायिक की क्रिया तथा पाठ को भूल जाना।

(११) प्रोषधोपवास के (५)—

इस व्रत में दो दिन दो रात लगते हैं, धारणा और पारणा के दिन एक समय मध्यान्ह में भोजन होता है और व्रत के दिन पूरा उपवास होता है सर्व प्रकार की कषाय तथा आरंभ मन्द करने के वास्ते होता है, उसके ये पांच अतिचार हैं। १. बगैर देखे तथा बगैर सोधे वस्तु का रखाना, २. उठाना, ३. बिस्तरा बिछाना, ४. व्रत में अनादर भाव रखना, ५. व्रत की क्रियाओं को भूल जाना।

(१२) भोगोपभोग परिमाण व्रत (५)—

एक दफा भोगने में आवे जैसे भोजन वह भोग है, जो बार बार भोगने मे आवे वह उपभोग है जैसे आभूषण, इसमें इच्छाओ को मन्द करने के लिये सर्व वस्तुओ को रखने की मर्यादा होती है । इसके यह अतिचार बतलाये हैं । १. सचित्त आहार करना, २. सचित्त में रखा हुआ आहार करना, ३. सचित्त अचित्त मिला हुवा आहार करना । ४ अधपकी अवस्था में आहार करना । ५ अधिक पका हुआ यानी जला हुआ आहार करना ।

(१२) अतिसम विभाग (५)—

अपने बनाये हुवे शुद्ध भोजन में से किसी पात्र को आहार दान देना अति सम विभाग नाम का व्रत कहलाता है इसके यह पाच अतिचार हैं ।

(१) सचित वस्तु पर रख कर भोजन देना ।
(२) सचित वस्तु से ढ़क कर भोजन देना ।
(३) दूसरे व्यक्ति को भोजन देने को कह कर आप दूसरे कार्य में लग जाना ।
(४) दूसरे घर आहार दान हुवा सुन कर आप ईर्ष्या भाव रखना । (५) भोजन के

समय को टाल कर आहार दान देना।

(१४) सल्लेखना मरण (५)—

आयु निकट जानकर जीवन पर्यंत के लिये या कुछ सीमित समय के लिये चार प्रकार के आहार का त्याग कर देना और आत्म चिंतवन मे लग जाना, सल्लेखना मरण कहलाता है, इसके यह पांच अतिचार कहे हैं। (१) जीने की आशा रखना, (२) मरने की बांछा करना, (३) मित्रों से राग भाव रखना, (४) सुख सामग्री की तरफ मन चला जाना, (५) आगे अच्छी गति मिले ऐसी भावना रखना।

चर्चा नं० १४१ सामायिक में टालने योग्य ३२ दोष

सामायिक में ३२ दोष — (१) अनादृत स्तब्ध, (२) प्रतिष्ठ, (३) परपीड़ित, (४) दोलायत, (५) अंकुश, (६) कच्छपरिगत, (७) मत्स्योभॅन, (८) मनोदुष्ट (९) वैदिक, (१०) बध, (११) भय, (१२) विभ्यत, (१३) रिद्धिगौरव, (१४) गौरव, (१५) तिनत, (१६) विननीन, (१७) प्रदुष्ट (१८) तर्जित, (१९) शब्द, (२०) हीलत, (२१) तृवलित, (२२) संकुचित, (२३) दिग-

विलोडन, (२४) अदिष्ट, (२५) सयमकर मोचन, (२६) लब्ध, (२७) अवैलब्ध, (२८) हीन, (२९) उन्न चूलिका, (३०) मुक अदुष्ट (३१) दर्दुर, (३२) चलुनित ।

चर्चा नं० १४२ श्रावक के भोजन के समय टालने योग्य अन्तराय

श्रावक के अन्तराय (१) १ मांस, २ हाड़, ३ गीला चमड़ा, ४ अगुल बहती खून की धार, ५ पंचेन्द्रिय (मुर्दा) शरीर, ६ भिष्टा और ७ चांडाल के देखने मात्र से अन्तराय हो जाता है।

(२) १ सूका हुवा चमड़ा, २ नाखून, ३ बाल, ४ पाख, ५ असयमी स्त्री व पुरुष, ६ पंचेन्द्रिय तिर्यंच, ७ त्यागी हुई वस्तु के खाने में आवे, ८ रजस्वला स्त्री, इन सर्व वस्तु के छूनेमात्र से अन्तराय होता है ।

(३) आवाज सुनकर—(१) किसी के मरण की सुनकर या विलाप सुनकर या किसी की दुखभरी आवाज सुनकर। (२) किसी मकान में आग लगी सुनकर। (३) नगर में मारकूट की आवाज सुनकर । (४) किसी को मरा हुवा सुनकर । (५) धर्मात्मा पर आया उपसर्ग

सुनकर।

(४) मन की ग्लानि—(१) शंका उपजे, सागभाजी की आकृति मांस जैसी दीखे। (२) पीने के पदार्थ शराब जैसे दीखें। (३) भोजन की शक्ल भिष्टा जैसी दीखे। (४) मन में निंद्य वस्तु का ध्यान आजावे।

चर्चा नं० १४३ खरीजवार विषय

सात स्थान मौन	१ देव पूजा, २ सामायिक, ३ भोजन, ४ स्नान, ५ कुशील सेवन, ६ लघुशका, ७ दीर्घशका, (शौच) नोट—मौनधारी पुरुष आँखों की सैन से इशारा करे नहीं, हु कार से सकेत करे नहीं।
पाच अनर्थ दण्ड	१ अपध्यान, २ पापोपदेश, ३ परमाद चर्या, ४ हिंसा दान, ५ दुश्रुत।
सामायिक की शुद्धि	१ आसन, २ क्षेत्र, ३ काल, ४ विनय, ५ मन, ६ वचन, ७ काय इन सात की शुद्धि।
सामायिक का काल	जघन्य दो घड़ी, मध्यम चार घड़ी, उत्कृष्ट ६ घड़ी, जितनी घड़ी की सामायिक होती है 'प्रातःकाल सूर्य उदय से मध्यान्हकाल सूर्य शिखर पर होने से सायकाल सूर्य अस्त होने पर आधे समय पहले और आधे समय पीछे।
सामायिक	(क) सामायिक प्रारम्भ करने से पहले तीन लोक के पंच परमेष्ठियों तथा कल्याणक क्षेत्रों को

तथा कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालयों को पंचांग नमस्कार करनी चाहिये, फिर बाद में खड़े होकर गोडों तक लम्बे हाथ करके तीन दफे नवकार मन्त्र जपना चाहिये, फिर पूर्व या उत्तर जिस तरफ भी मुँह करके खड़े हो दोनों हाथ की अजुली जोड़कर बाये से दायें घुमाकर अजुली पर मस्तक रखकर (माथा नवा कर) नमस्कार करना चाहिये फिर दाये हाथ को घुमाते हुवे चारों दिशा में आवर्तन शिरोनति करनी चाहिये, फिर सामायिक के लिये पंच नमस्कार करके बैठ जावें। ऊपर की सर्वक्रियायें सामायिक पूर्ण होने पर भी करनी चाहिये, परन्तु ऊपर में नमस्कार सब से पहले किया गया है यहाँ सब से बाद में किया जाता है सामायिक के यह छह भाग है, १ सामायिक, २ वन्दना, ३ स्तवन, ४ प्रतिक्रमण, ५ प्रत्याख्यान, ६ कायोत्सर्ग इसका पूरा खुलासा सामायिक पाठ में देख लेना।

(ख) सामायिक के समय रागद्वेष छोड़कर आत्मचिंतवन में लगना चाहिये तथा परिग्रह का जो शरीर से अलग है इतने समय के लिये त्याग करके सामायिक करे।

ध्यान के ५ हेतु	१ वैराग्य, २ तत्वज्ञान, ३ निर्ग्रन्थपना, ४ मन स्थिर करना, ५ परिषहों पर विजय पाना।
सम्यक्त्व के ३ लक्षण	१ आप्त, २ आगम, ३ पदार्थ पर श्रद्धान करना प्रतिती रुचि अवगाढ़ता होनी)।

चर्चा नं० १४४ रत्नत्रय का स्वरूप

रत्नत्रय (क) सम्यग्दर्शन के व्यवहार में अनेक अर्थ हैं परन्तु भाव अर्थ सबका एक ही है।

(१) यथार्थ भाव सहित प्रतीति को सम्यग्दर्शन कहते हैं।

(२) दर्शनोपयोग को (सामानाभास) दर्शन कहते हैं।

(३) आंख से देखने को भी दर्शन कहते है।

नोट—(क) परन्तु जहाँ जो प्रसंग चल रहा हो वहाँ उस प्रसग के अनुसार ही दर्शन का अर्थ लगाना पड़ेगा यहां मोक्ष मार्ग का प्रसग चल रहा है, इसलिए दर्शन का अर्थ आप्त आगम, छह द्रव्यों की प्रतीति श्रद्धा ही अर्थ लगाना पड़ेगा।

(ख) कोई सात तत्वों के श्रद्धान को सम्यग्दर्शन कहता है, कोई स्व-पर विचार को सम्यग्दर्शन कहता है, कोई आत्मा में तल्लीन होने को सम्यग्दर्शन कहता है. कोई आत्म सुची को सम्यग्दशन कहता है, कोई देव धर्म गुरु की प्रतीति को सम्यग्दर्शन कहता है, परन्तु यह कथन शैली और दृष्टियों के भेद से

भेद मालूम हो रहा है, परन्तु सर्व का ध्येय आत्मा की कर्मरहित शुद्ध अवस्था को प्राप्त करना है। मार्गो भेद है अन्तिम ध्येय में कोई भेद नहीं है।

(ग) व्यवहार में जिसको संवेग आदि आठ गुण होते हैं और निशंकादि आठ अंग होते हैं और २५ मल दोषादि करके रहित होता है, उसको सम्यग्दृष्टि कहते हैं।

(ख) संशय, विमोह, विभ्रम रहित, आप्त, आगम, पदार्थों के जानने को सम्यक्ज्ञान कहते हैं।

(ग) वीतराग भावसहित, सावद्य योग के त्याग करने को सम्यक चारित्र कहते हैं।

चर्चा नं० १४५ फुटकर विषय

नव देवता (क) विनय करने योग्य ये नव देवता हैं—१. पंच परमेष्ठी, १ जिन मन्दिर, १ जिन प्रतिमा, १ जिन वचन, १ जिन धर्म।

(ख) ऊपर कहे नौ देवताओं की विनय करने से रत्नत्रय की वृद्धि होती है।

चंदोवा लगाने के १२ स्थान १ पूजा का स्थान, २ सामायिक, ३. चूल्हा, ४ पानी का बर्तन रखने का स्थान, ५. चक्की, ६. ओखली में धान कूटने का स्थान, ७. भोजन स्थान, ८. सोने का स्थान, ६. आटा छानना,

१० व्यापार आदि करने के सर्व स्थान, ११. धर्म चर्चा स्थान, १२ बैठने का स्थान।

शील के नौ बाढ़—१. स्त्री जहाँ बैठे वहाँ नहीं बैठना, २ स्त्री के शरीर को राग भाव से नहीं देखना, ३ पर्दे के अन्दर बैठ कर स्त्री से बात चीत नहीं करना, ४ पहले भोगे हुवे भोग नहीं याद करना, ५ कामोद्दीपक भोजन नहीं खाना, ६ शृंगार नहीं करना, ७ स्त्री की सेज पर नहीं सोना, ८ काम कथा नहीं सुनना, ९ पेट भर भोजन नहीं करना।

चर्चा नं० १४६ मुनिमहाराज ४६ दोष टाल कर आहार लेते हैं।

मुनि महाराज के आहार सम्बधी ४६ दोष (क) १६ उद्गम दोष जो आहार बनाते समय दातार टालता है।

(१) उद्देशिक दोष—मुनि के लिये बनाया हुवा ही आहार। (२) अधिअधि—अपने लिये थोड़ा भोजन बनाया था मुनि महाराज का आया सुनकर और भोजन मिला देना। (३) युति-करम—अप्राशुक आहार देना। (४) मिश्र—असयमी और सयमी दोनों को एक पक्ति में बिठला कर आहार देना। (५) स्थायित—जिस

बर्तन में भोजन बनाया था उससे दूसरे बर्तन मे निकालकर आहार देना। (६) बलि-दोष—देवी आदि की पूजा वास्ते बने हुवे भोजन में से आहार देना। (७) प्रावर्त्ती दोष—आहार के समय को टालकर या ढ़ील (देर) करके आहार देना। (८) प्राविकरण—मुनि को भोजन देकर भोजन के बर्तन बाहर निकाल देना। (६) कृत दोष—अपना द्रव्य तथा पराया द्रव्य या मन्त्र से मगवाया हुवा द्रव्य आहार में देना। (१०) ऋण दोष—द्रव्य उधारा लाकर आहार देना। (११) परिवर्तन दोष—अपने द्रव्य से दूसरे का द्रव्य बदलवा कर आहार देना। (१२) अभिघट—दूसरे गाव से आते ही तुरन्त आहार दे देना। (१३) उद्भिन्न दोष—किसी मुँह वधे हुवे बर्तन में द्रव्य रखा है मुँह खोलकर या शील तोड़कर आहार दान देना. (१४) पालारोहण दोष—ऊंचे स्थान पर भोजन रखा है सीढ़ी चढ़ कर लाकर भोजन देना। (१५) अछेद दोष—राज आज्ञा उल्लंघन के भय से आहार देना। (१६) अनीमार्छ—जिस भोजन का रखवाला तो हो मगर स्वामी मौजूद न हो उसमें से आहार देना।

(ख) १६ उत्पाद दोष जो पात्र लेते समय टालते हैं।

(१) धात्री दोष—धाय की तरह बच्चा को खिलाना तथा सिंगार करने लग जाना। (२) दूत दोष—दातार के दूसरे गांव के सम्बन्धियों के समाचार सुना कर आहार लेना। (३) निमित्त दोष—दातार को निमित्त ज्ञान से रिझा कर आहार लेना। (४) आजीविका दोष—दातार को आजीविका के साधन बतला कर आहार लेना, (६) चिकित्सा दोष—दातार को (अपनी तथा उसकी) रोग की औषधि बतलाकर आहार लेना (७) क्रोध दोष—क्रोध भाव से आहार लेना, (८) मान दोष—मानी भावों से आहार लेना, (९) माया दोष—दातार पर प्रभाव डालने के वास्ते मायाचारी से ऊँची क्रियायें दिखलाकर आहार लेना, (१०) लोभ दोष—रसिक भाव से आहार ले ना और भेट में कुछ द्रव्य चाहना। (११) पूर्व स्तुति दोष—दातार की प्रशंसा करके आहार लेना, (१२) विद्या दोष—दातार को प्रसन्न रखने के वास्ते विद्या देना तथा आहार लेना। (१३) पश्चात स्तुति दोष—आहार लेने

के बाद दातार की प्रशंसा करना। (१४) मंत्र दोष—दातार को प्रसन्न रखने वास्ते मंत्र आदि बतलाकर आहार लेना। (१५) चूर्ण दोष—नेत्र आदि की ज्योति बढ़ाने वाले पोष्टक आहार लेना (१६) मूल कर्म दोष—वशीकरण आदि मन्त्र आदि का चमत्कार बतलाकर आहार लेना।

(ग) एषणा दोष—जो भोजन के द्रव्य में दोष होते हैं वह यह हैं मुनि इनको टालकर आहार लेते हैं।

(१) शंकित दोष—(क) आहार सदोष है या निर्दोष है यह शंका होते हुए भी आहार ले लेना। (ख) दूसरे भोजन के लगे रहने पर भी (हाथों में) आहार लेना।

(२) निमित्त दोष—अप्राशुक वस्तु पर रखा हुआ आहार लेना।

(३) पिहत्त दोष—सचित्त वस्तु से ढका हुआ आहार ले लेना।

(४) व्यवहार दोष—अपने कारोबार से निमटकर दातार आहार दे वह आहार ले लेना।

(५) दायक दोष—सूतक वाला, रोगी, नपुंसक, बालक, वृद्ध, गर्भवती स्त्री, दातार ऊँचे स्थान पर बैठा हो, आग बुझा रहा हो,

तेल की मालिस करता हुआ या स्नान करता हुआ खड़ा हो गया हो, रोते हुए बालक को छोड़ दिया हो ऐसी अवस्था वाले व्यक्तियों के हाथ से आहार लेना।

(६) मिश्र दोष—अचित्त वस्तु मे सचित्त वस्तु मिलाकर (गर्म जल में ठंडा जल मिलाना ठडे में गर्म) दिया हुआ आहार लेना।

(७) अपरणति दोष—जिसका वरणादि न बदला हो ऐसा आहार लेना।

(८) लिप्त दोष—हाथ या बर्तन दूसरी वस्तु से सना हुआ हो उस अवस्था में दिया हुआ आहार लेना।

(६) त्यजन दोष—जो द्रव्य शक्तिहीन हो गया हो, गल गया हो, सड़ गया हो, ऐसे द्रव्य का बना हुआ आहार लेना।

(१०) मृच्छित दोष—हाथों में भोजन लग रहा है उन हाथों से सना हुआ आहार (भोजन) लेना।

(घ) फुटकर दोष—इन दोषों को टालकर ही मुनि महाराज आहार लेते हैं।

(१) संयोजन दोष—स्वाद के निमित्त ठडा तथा गर्म भोजन मिलाकर खा लेना, (२) अप्रमाण दोष—भूख

से ज्यादा या ग्रास के प्रमाण से ज्यादा भोजन लेना, (३) अगार दोष—स्वाद ले लेकर भोजन खाना, (४) धूम दोष—भोजन स्वाद रहित हो तो दातार की निंदा करते हुए क्षोभित होते हुए आहार करना।

नोट—इन ४६ दोषों को टालकर आहार लेने वाले मुनि महाराज ही एषणासमिति के पूर्ण रूप में पालने वाले होते है।

चर्चा नं० १४७, ३२ अन्तराय आने पर भोजन छोड़ देते हैं

(१) काक अन्तराय—कऊआ बीट कर देवे। (२) अमेध्य अन्तराय—जो परदे के ऊपर अशुद्ध पदार्थ लगे दीखे। (३) छर्दि अन्तराय—उल्टी होजाय। (४) रोधन अन्तराय—अपने या पर के शरीर से खून निकलने से कोई रोने लग जाय। (५) अश्रुपात अन्तराय—अपने या पर के आसू निकल आवें। (६) जानु परामर्श—जघा के नीचे का भाग छू जाय। (७) जानू परिप्रति-क्रम—नाभिर्धो निर्गमन—छोटा दर्वाजा होने के कारण गोड़ों पर हाथ रखकर नाभि तक सिर झुकाकर निकलना पड़े। (८) त्यजन दोष—त्यागे हुवे पदार्थ का भूल से भक्षण होजाना। (९) जन्तु-वध दोष—अपने या पर से जीव मर जाय। (१०) काकादिपिंड दोष—कऊआ ग्रास उठाकर ले जावे। (११) पानी आदि पिंड

पतन दोष—अंजुली में से ग्रास नीचे गिर जाय। (१२) पानी पात्र जन्तु वध दोष—अंजुली में कोई जीव गिरकर मर जाय। (१३) मांसादि दर्शन दोष, मांस दिखलाई दे जावे। (१४) उपसर्ग दोष—कोई उपसर्ग आजाय। (१५) पादान्तर जीववध दोष—पैरों के नीचे कोई जीव मर जावे (१६) पाद जीव गमन दोष—दोनों पैरों के नीचे में कोई जीव निकल जाय। (१७) भाजन सम्पात दोष—दातार के हाथ से बर्तन गिर जाय। (१८) उच्चार दोष—अपने उदर में मल गिर जाय, (१६) अप-श्रवण दोष—अपना मूत्र बह जाय। (२०) अभोज्य ग्रहण प्रवेश—चाण्डालादि के घर में प्रवेश होजाय। (२१) पतन दोष—मूर्च्छा आकर गिर जाय। (२२) उपवेशन दोष—घबराकर बैठ जाना। (२३) भयमदष्ट दोष—असमर्थी भी भोजन कर गया हो। (२४) भूमि स्पर्शन दोष—शुद्धि करते हुये हाथ से भूमि छूई गई हो। (२५) निष्ठि वचन—खोटा वचन कहा गया हो। (२६) श्लेशम दोष—श्लेष्मा निकल गया हो। (२७) उदरक्रमी निसर्ग दोष—उदर से लटादि निकल पड़े हो। (२८) अदत्त ग्रहण दोष—बिना दी गई हुई वस्तु भूल से ग्रहण करली गई हो। (२९) प्रहार दोष-अपने या पराये हथियार से घातक वार। (३०) ग्रामदाह-गांव में आग लगी होय, (३१) पाद ग्रहण—पैर से कोई भाजन की वस्तु छू गई हो, (३२) कर ग्रहण—हाथ से कोई वस्तु छू गई हो।

चर्चा नं० १४८ मुनि महाराज आहार के समय

१४ मल दोष टाल कर आहार लेते हैं।

चौदह मल दोष — १ नाखून, २ चर्म (चमड़ा), ३ रोम (बाल), ४ रुधिर (लोहू खून), ५ जन्तु (मुर्दाजीव), ६ मांस, ७ अस्थि (हाड़), ८ उगने योग्य जो गेहूँ आदि कण, ९ गेहूं जौ के अवयव (अन्दर की गिरी), १० जामुन आदि (साबुत फल), ११ कुण्ड मालादि कद (सूक्ष्म अवयव के कद), १२ आर्द्रादि (अदरक आदि), १३ पक्करुधिर (मवाद), १४ मूल-मूलादि (मूली गाजर आदि)।

नोट—कुछ भोजन में गिर पड़ने में, कुछ देखनेमात्र में ही अन्तराय होता है।

चर्चा नं० १४९ मुनि महाराज की गोचरी (भोजन के वास्ते जाना) के ५ भेद

मुनि महाराज की गोचरी के ५ भेद — १ गोचरी—जैसे गऊ के सामने गरीब या अमीर रूपवती या कुरूपवती कहो कोई भी घास लावे तो गऊ की दृष्टि घास में ही रहती है, रूप तथा लक्ष्मी में नहीं रहती, यह दृष्टि मुनि महाराज की आहार समय रहती है।

२. भ्रामरी—भवर फूल की मकरद को पी लेता है फूल की पांखड़ी को हानि नहीं पहुँचाता

इसी तरह मुनि महाराज इतना अल्प भोजन लेते हैं कि श्रावक को दुबारा बनाना नहीं पड़े।

३. दाह प्रशमण—जैसे कहीं आग लगी हो, जल, रेत, मिट्टी कोई भी पदार्थ अग्नि पर डालकर बुझाने की दृष्टि रहती है, यही दृष्टि मुनि महाराज की रहती है, भूख रूपी अग्नि प्रज्व-लित होने पर भी सरस, नीरस, जो भी भोजन मिले शान्ति से ग्रहण कर लेते हैं।

४. गर्त पूरण—जैसे मकान में गड्ढा पड़ जाता है तो ईंट, पत्थर, मिट्टी जो भी पदार्थ मिले गड्ढे को भर देते हैं यही दृष्टि मुनि महाराज की भोजन लेते समय रहती है जब भूख से पेट खाली होता है तो सरस नीरस शुद्ध पदार्थ मिले पेट (गड्ढा) भर लेते हैं।

५. अक्ष प्रक्षण—अर्थात् ऊँगम वृत्ति जैसे एक गाड़ी रत्नों को लिये हुवे अपनी मंजिल की तरफ जा रही है अगर पहिये में आग लगती दीखे तो उसको चिकणे पदार्थों से ऊंग देते हैं, इसी तरह मुनियों की शरीररूपी गाड़ी रत्नत्रयरूपी रुपयों को लेकर मोक्ष मन्दिर की तरफ जा रही है अगर शरीर में कमजोरी मालूम दे तो मुनि महाराज शुद्ध अल्प आहार

लेते है।

चर्चा नं० १५० मुनियों के चार भेद

मुनियों के ४ भेद

१. जिन कल्पी—अकेले ही विहार करते है।
२. थिवर कल्पी—सघ के साथ विहार करते हैं।
३. उत्सर्ग मार्गी—ऊँचे तप और चारित्र के धारक होते है।
४ अपवाद मार्गी—सुगम आचार के पालक होते हैं।

चर्चा नं० १५१ मुनियों के ५ भेद

मुनियों के ५ भेद

१. पुलाक—इन मुनियों के उत्तर गुण नहीं होते हैं। मूलगुण में भी अतिचार लगते है। २ बकुश—इन मुनियों के उत्तर गुण नहीं होते, परन्तु मूलगुण निर-अतिचार होते है। ३. कुशील—(क) कषाय कुशील, मूलगुण पूरण होते हैं उत्तर गुणों मे अतिचार लगता है। (ख) प्रतिसेवना कुशील—मूलगुण, उत्तर गुण दोनों निर अतिचार होते हैं। ४. निर्ग्रन्थ—क्षीण मोही बारहवें गुण स्थान वाले मुनि जहाँ मोहनीय कर्म पूर्णतया नष्ट हो जाता है। ५. स्नातक—सयोग केवली तेरहवें गुण स्थानवर्ती जहाँ चार घातिया कर्म पूर्णतया नष्ट होजाते हैं।

चर्चा नं० १५२ मुनि महाराज आठ तरह की शुद्धि करते हैं

आठ शुद्धि — १ भाव शुद्धि, २ वचन शुद्धि, ३ काय शुद्धि, ४ ईर्यापथ शुद्धि, ५ भिक्षा शुद्धि, ६ विनय शुद्धि, ७ शयनआसन शुद्धि, ८ व्युत्सर्ग शुद्धि ।

नोट—मन वचन काय की प्रवृत्ति दयामयी होती है, चलने में, भोजन लेने में, सोने में, बैठने में, मल मूत्र करने में किसी जीव की विराधना नहीं होने देते, देवगुरुशास्त्र में पूरी विनय रखते हैं।

चर्चा नं० १५३ मुनि महाराज के आहार लेने के छह लक्ष्य

आहार लेने के ६ लक्ष्य — (१) भूख शांत करना, (२) छह आवश्यक क्रियायें शांति पूर्वक पूरी हो सकें, (३) प्राणों की रक्षा हो, (४) धर्म साधन में स्थिरता रहे, (५) संयम साधन में स्थिरता रहे, (६) संघ की वैय्यावृत्त कर सकें।

चर्चा नं० १५३ मुनियों के आहार लेने में इन पाँच बातों पर लक्ष्य नहीं है

आहार लेने में ५ लक्ष्य नहीं — (१) शरीर को पुष्ट करना, (२) शरीर को कान्तिवान बनाना, (३) शरीर को बलवान बनाना, (४) स्वाद ले लेकर भोजन लेना, (५) आयु का बढ़ाना ।

नोट—जैन सिद्धान्तो में पौष्टिक भोजन लेने से आयु बढ़ जाती है यह मान्यता नहीं है परन्तु कोई कोई मत ऐसा भी मानते हैं, सेहत अच्छी रहने से आयु बढ़ जाती है उस सिद्धान्त को रखकर पांचवीं बात का वर्णन किया गया है।

चर्चा नं० १५४ विदेह क्षेत्र के स्थानों का वर्णन

नं०	स्थानों का नाम	स्थानों की गणना	स्थान का स्वरूप
१.	गांव	९६ करोड़	जिसके चारों तरफ कांटो की बाड़ लगी हो।
२.	खेट	२६ हजार	जो नदी और पर्वत के बीच में बसी हो।
३.	नगर	२६ हजार	जिसके चारो तरफ कोट बना हुआ होता है।
४.	करवट	२४ हजार	जो पहाडो के बीच में बसा हुआ होता है।
५.	मटव	४ हजार	जिसके साथ ५०० गांव लगे होते हैं। (जिला)
६	पट्टन	४८ हजार	जहां रत्नों की खान होती है।
७	द्रोण	९९ हजार	जो नदियों के किनारे पर बसे हों।
८.	समभा-वाहन	१४ हजार	समुद्र की खाड़ी पर बसी हों।

६. दुर्गाटवी २८ हजार	पहाड़ों के ऊपर बसे हों।
१० टापू ५६ हजार	जो समुद्र के बीच में बसे हों।
११. अतरद्वीप ५६ हजार	एक एक टापू पर बसा हुआ द्वीप (मुल्क)
१२. रत्नाकर २६ हजार	जहा रत्नों का व्यापार होता है।
१३. भूतकुल ७००	व्यन्तर देवों के स्थान।
१४. वर्षा १६	सात वर्षायें काले बादलों से होती है, १२ वर्षायें सफेद बादलों से होती है, वर्षाऋतु में साढ़े चार महिने वर्षा होती है खेती सूखने नहीं पाती।
१५. ईती ७	खेती और प्रजा को सात प्रकार का भय नहीं होता, (१) अधिक वर्षा का होना, (२) कमती वर्षा का न होना, (३) मूषा (चूहा) (४) टिड्डी, (५) तोता, (६) अपनी फौज का उपद्रव, (७) शत्रु की फौज का उपद्रव।
१६. भीती १	विदेह में महामारी नहीं पड़ती।
१७. विदेह क्षेत्र की राजधानी का स्वरूप	(क) पांच सौ छोटे दरवाजे होते हैं, (ख) एक हजार बड़े दरवाजे रत्नमई होते हैं। (ग) बारहहजार गली होती हैं। (घ) एक हजार चौपड़ के बाजार

होते है। (ङ) राजधानी से बाहर ३६० छोटी वस्तियाँ होती हैं। (च) शहर के बीच में भगवान का जिन मन्दिर होता है और पास ही राजा का रत्नमई मन्दिर होता है। (छ) शहर के कोट स्वर्णमई होते हैं। (ज) २८ द्वीप में १६० विदेह होते हैं. ऊपर लिखी हुई सर्व रचना १ विदेह की बतलाई है, हरएक विदेह में ही ऐसी ऐसी पूर्ण रचना होती हैं।

चर्चा नं० १५६ अढाई द्वीप में, लवण समुद्र और कालोदधि समुद्र के ६६ अन्तरद्वीपों में बसने वाले कुमानुषों का वर्णन

कुमानुषों का वर्णन

(क) जो जीव जिनलिंग (नग्न दिगम्बर मुनिवेष) धारण करके मायाचारी करते है, ज्योतिष मन्त्र वैद्यक आदि बतलाकर श्रावकों को प्रसन्न करके आहार ग्रहण करते हैं, श्रावकों से धन चाहते है, ऋद्धि, यश. शरीर का सुख, मान बड़ाई, गौरव बढ़ाना चाहते हैं, गृहस्थों के वर कन्याओं के विवाह का संयोग मिलवाते हैं या सम्यग्दर्शन के घातक उपदेश करते हैं,

अपने लगे हुवे दोषों की गुरुओ के सामने आलोचना नहीं करते, दूसरे पुरुषों के तप को झूठे दोष लगाते हैं, मिथ्यादृष्टि पचाग्नि आदि साधन करते हैं, जो भोजन के समय में मौन नहीं करते, अपवित्र स्थान में अपवित्र भोजन, खोटे कषाय भाव से करते हैं, जो जीव सूतक पातक तथा स्त्री का मासिक धर्म का विचार न करके गृहस्थ के सर्व धर्म कार्य करते रहते हैं, उनके हाथ से भोजन लेते हैं, जो कुपात्र की भक्ति करके भोजन देते हैं, ऐसे ऊपर लिखे सर्वजीव मन्द कषाय के कारण से मरकर अढ़ाई द्वीप के लवण समुद्र व कालोदधि समुद्र के ६६ अन्तर द्वीपों में कुमानुष (जघन्य भोग भूमिया) पैदा होते हैं, उनका शरीर मनुष्य जैसा होता है, मुख पशु जैसा होता है और मीठे जल, मीठी मट्टी वा कल्पवृक्षों के मीठे फल खाते हैं, उनको कोई परिश्रम करना नहीं पड़ता, खोटी ऋतु या शत्रुओं से कोई कष्ट नहीं पहुंचता है। (२) कौरुक जाति के कुमानुष गुफाओं में रहते हैं मीठी मिट्टी खाते हैं, मिश्री की मानिंद मीठा जल पीते हैं, शेष सर्व कुमानुष कल्पवृक्षों के नीचे रहते हैं और कल्पवृक्षों के

फल खाते हैं, मीठे रस पीते है, ये जघन्य भोग भूमिया जीवों की तीसरी अवस्था है अर्थात जघन्य भोग भूमि में भी उत्तम जघन्य यह तीन दर्जे हैं।

(ख) जम्बूद्वीप से मिलते हुये लवण समुद्र के किनारे पर स्थित आठ अंतर द्वीपों का वर्णन—

न०	स्थान स्वरूप	बसने वालों के मुख का आकार
(१)	हिमवान पर्वत के पूर्वी भाग के निकट, लवण समुद्र में अन्तर द्वीप।	मछली सरीखा मुख (१)
(२)	हिम्मवान पर्वत के पश्चिमी भाग के निकट लवण समुद्र में अंतर द्वीप।	काला मुख (२)
(३)	भरत बैताड के पूर्वी भाग के निकट लवण समुद्र मे अन्तर द्वीप।	मीन जैसा मुख (३)
(४)	भरत बैताड़ के, पश्चिमी भाग के निकट लवण समुद्र में अतरद्वीप।	गऊ जैसा मुख (४)
(५)	शिखरणी पर्वत के पूर्वी भाग के निकट, लवण समुद्र में अतर द्वीप।	मेघ जैसा मुख (५)
(६)	शिखरणी पर्वत के पश्चिमी भाग के निकट, लवण समुद्र में अंतर द्वीप।	बिजली जैसा मुख (६)
(७)	ऐरावत बैताड़ की पूर्वी भाग के निकट, लवण समुद्र में अतर द्वीप।	दर्पण जैसा मुख (७)

(८) ऐरावत बेताड़ के पश्चिम भाग के निकट लवण समुद्र में अंतर द्वीप।	हाथी जैसा मुख (८)

(ग) जम्बूद्वीप की वेदी से दूर क्षेत्र पर लवण समुद्र में चारों तरफ मोतियों की माला की तरह बिखरे हुये १६ अतर द्वीपों का वर्णन—

नं०	स्थान स्वरूप	मुख आकार व बनावट शरीर
१.	पूर्व दिशा	सिर्फ जांघ वाले
२	अन्तराल क्षेत्र	सिंह मुख
३.	आग्नेय विदिशा	लम्बे कान वाले
४	अन्तराल क्षेत्र	कुत्ता जैसा मुख
५.	दक्षिण दिशा	सिर्फ पूछ वाले
६.	अन्तराल क्षेत्र	घोड़ा जैसा मुख
७.	नैऋत्य विदिशा	इतने लम्बे कान कि एक को ओढ लो, एक को बिछालो।
८	अन्तराल क्षेत्र	भैंसा जैसा मुख
९.	पश्चिम दिशा	सींघ वाले
१०,	अन्तराल क्षेत्र	सूअर जैसा मुख
११.	वायव्य दिशा	बहुत ही लम्बे कान वाले
१२.	अन्तराल क्षेत्र	बघेरे जैसा मुख
१३.	उत्तर दिशा	गूंगे
१४.	अन्तराल क्षेत्र	घूघू (उल्लू) जैसा मुख
१५.	ईशान विदिशा	शुशा (खरगोश)

१६. अन्तराल बन्दर जैसा मुख

(घ) (ग) में वर्णन किये हुवे अन्तर द्वीपों के अनुसार धातुकी खंड से मिले हुवे लवण समुद्र क ७ किनारो पर भी २४ अन्तर द्वीप हैं, परन्तु इनमें धातुकी खंड के दोनो मेर के हिमवान पर्वत दो भरत वैताड़ पर्वतो की अपेक्षा ही वर्णन समझना।

(ङ) (ग) में लिखे हुवे अन्तरद्वीपों के अनुसार ही धातुकी खड मे मिले हुवे कालादधि समुद्र में भी २४ अन्तरद्वीप हैं, परन्तु इनमें धातुकी खंड के दोनों मेरों के दो शिखरणी पर्वत, दो ऐरावत वैताड़ पर्वतों की अपेक्षा से वर्णन है।

(च) (ग) में लिखे हुवे अन्तरद्वीप के अनुसार ही पुष्करार्द्ध द्वीप से मिले हुवे, कालोदधि समुद्र के किनारे पर २४ अन्तरद्वीप हैं परन्तु यहाँ पर इनमें पुष्करार्द्ध द्वीप के दोनों मेरों पर के दो हिमवान पर्वत, दो भरत वैताड़ पर्वत की अपेक्षा वर्णन है।

(छ) इस तरह ९६ अन्तरद्वीपों में कुमानुष जीव बसते हैं, अढाई द्वीप से बाहर असंख्यात द्वीप, समुद्र में कुमानुषों की उत्पत्ति नहीं होती है।

चर्चा नं० १५७ समयसार में वर्णन की हुई आत्मा की ४६ शक्तियाँ

आत्मा की ४६ शक्तियाँ

१. जीवत्व शक्ति—आत्मा के कर्म चेतना, कर्म फल चेतना, ज्ञान चेतना, सर्व चेतनाओं में और चारों गति, विग्रह गति, सर्व गतियों में, संसारी तथा सिद्ध सर्व अवस्थाओं में अनादिकाल से, अनन्तकाल तक निरन्तर हर समय में रहने वाले ज्ञान प्राण को जीवत्व शक्ति कहते हैं।

नोट—यह शक्ति जड़वादियों के सिद्धान्त को निराकर्ण करती है।

२. निकांचित शक्ति—पुद्‌गल के स्पर्श, रस, गध, वर्ण गुणों का आत्मा में अभाव होता है।

३. दृश शक्ति—आत्मा में अनाकार उपयोगमयी शक्ति है आत्मा निज स्वरूप में तल्लीन रहती है।

४. ज्ञान शक्ति—आत्मा में, साकार उपयोगमयी शक्ति है, लोकाकाश अलोकाकाश के सर्व पदार्थ एक समय में ही झलक सकते हैं और आत्मा सर्व पदार्थों को युगपत एक समय में ही जान सकती है।

५. सुख शक्ति—आत्मा में निराकुल गुण और अनन्त सुखमई शक्ति मौजूद है।

६. वीर्य शक्ति—कर्म रहित होने पर सिद्ध आत्मा अनन्तकाल तक निरन्तर स्वरूप का रसपान करती रहती है, कभी थकावट नहीं आती।

७. प्रभुत्व शक्ति—आत्मा में अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अनन्त वीर्य, अनन्त सुख आदि अनन्त शक्तियाँ विद्यमान हैं, किसी तरह भी परावलम्बी नहीं है।

८. विभुत्व शक्ति—आत्मा संसार के सर्व चराचर पदार्थों को जानता हुवा भी पर पदार्थों का रस नहीं लेता है, निरन्तर निज रस में ही लीन रहता है।

९. सर्वदर्शित्व शक्ति—आत्मा विश्व के सर्व पदार्थों को देखता हुवा भी निज आत्म स्वरूप का ही दर्शन करता रहता है।

१० सर्वज्ञत्व—सर्व चराचर पदार्थों को युगपत एक समय जानते हुवे भी आत्मा का उपयोग निज-स्वरूप में ही लगा रहता है।

११. स्वच्छत्व शक्ति—दर्पण की तरह आत्मा का ज्ञान इतना स्वच्छ और निर्मल है कि संसार के सर्व चराचर पदार्थ एक समय में दा झलक सकते हैं।

१२ प्रकाश शक्ति—आत्मा के अनन्तज्ञान का प्रकाश

इतना विस्तृत है कि वह संसार के सर्व चराचर पदार्थों के त्रिकालवर्ति अनन्त पर्यायों को युगपत एक समय में ही जान सकता है।

१३. असंकुचित विकाशत्व शक्ति—आत्मा का ज्ञान निराबाद है, जिसके विकाश में द्रव्य क्षेत्र काल आदि कोई भी कारण रुकावट नहीं डाल सकता है।

१४. कार्य कारण शक्ति—संसार में भ्रमण करती हुई आत्मा के प्रदेशों का आकार और अनंत ज्ञान की आवरणमई पर्यायों का संकोच और विस्तार कार्माण वर्गणाओं के कारण मिलने से दीपक के प्रकाश के समान घट बढ़ सकता है।

१५. प्रमाण शक्ति—आत्मा के स्वच्छ ज्ञान में प्रमाण शक्ति है, जिस पर संसार के ज्ञेय पदार्थों का प्रतिबिम्ब (आकार) बन जाता है।

उदाहरण—जैसे फोटोग्राफर के प्लेट पर सामने वाले व्यक्ति की तस्वीर आजाती है।

१६. शून्यत्व शक्ति—आत्मा सर्व द्रव्य क्षेत्र काल भाव की अपेक्षा तो अस्ति रूप है, परन्तु सर्व पर द्रव्यों के चतुष्टय का इसमें अभाव है, इस अभाव की दृष्टि की अपेक्षा आत्मा में शून्यत्व गुण है।

१७. अगुरु लघुत्व शक्ति—समुद्र की लहरों और हीरे की झलक के समान आत्मा के गुणों में सिद्ध व ससारी हर अवस्था में षट् गुण हानि वृद्धि होती रहती है, परन्तु आत्मा के अनन्त गुणो में कोई भी हानि वृद्धि नहीं होती, इस शक्ति का नाम अगुरु लघुत्व शक्ति है।

१८. उत्पादव्यय ध्रुवत्व शक्ति—आत्मा में परिणमन की अपेक्षा नवीन पर्याय का उत्पाद भी होता है, वर्तमान पर्याय का अभाव भी होता है, परन्तु द्रव्य की अपेक्षा हर पर्याय में जीव द्रव्य ज्यो का त्यो रहता है।

१९. परिणमन शक्ति—संसारी आत्मा जीवसमास, मार्गणा, गुणस्थानादि, विभाव परणतियो से रहित होकर सिद्धालय में स्वभावरूप से परिणमन कर सकता है।

२०. मुक्तत्व शक्ति—कर्मबंध के कारण ससार में रुकी हुई आत्माये कर्म रहित होकर मुक्त अवस्था को प्राप्त कर सकती हैं।

२१. अकर्त्तत्व शक्ति—अनादिकाल से चली आई हुई कर्मसंतति के निमित्त से ही नवीन कार्माण वर्गणाओं का आश्रव बंध होता है, शुद्ध आत्मा आश्रव व बंध का कर्त्ता नहीं है, (इस कथन

से अवतारवादियों का निराकरण होता है)।

२२ अभोग तत्व शक्ति—ज्ञान चेतना में स्वानुभव का रसपान करने वाली आत्मा कर्म फल की भोगता नहीं है।

२३. निःक्रियत्व शक्ति—लब्धि अपर्याप्तक पर्याय ज्ञानधारी जीव में भी सिद्धों के समान अनन्त-ज्ञान यानी केवलज्ञान प्राप्त करने की योग्यता है परन्तु वर्तमान में ज्ञानावर्णादि कर्म के निमित्त मे यह आत्मा खुद ही अल्पज्ञान से अल्पज्ञ हो रहा है।

२४. नियत प्रदेशत्व शक्ति—एक आत्मा असख्यात प्रदेशी है, सर्वलोकाकाश में समा सकती है, परन्तु ससार में अपने देह प्रमाण और केवल समुद्घात में सर्वलोक प्रमाण तथा सिद्धलोक में जितने अवगाहना के शरीर से मोक्ष प्राप्त हुई है उस देह से कुछ न्यून (कम) प्रदेश प्रमाण आकाश क्षेत्र में स्थित रहती है।

२५. व्यापकत्व शक्ति—दीपक के प्रकाश की तरह आत्मा जिस अवगाहना के शरीर में जन्म धारण कर लेती है, उतने ही क्षेत्र में समा जाती है।

२६. १. साधारण, २. असाधारण, ३. साधारण

असाधारण धर्मत्व शक्ति।

(क) अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख, अनंत वीर्य आदि गुणों में सर्व जीव समान हैं।

(ख) क्षेत्र काल गति, लिंग आदि, अनेक बातों में सिद्ध आत्मायें असमान हैं, जैसे सिद्धालय में बाहुबलीजी के आत्म प्रदेश ५२५ धनुष और श्री महावीर भगवान के आत्म प्रदेश ७ हाथ के आकाश को घेरे हुवे।

(ग) सिद्धालय में सर्व सिद्ध अनन्त चतुष्टय आदि गुणों में समान और क्षेत्रकालादि कई बातों में असमान हैं, इसलिये समान असमान युगपत मौजूद हैं।

२७. अनन्त धर्मत्व शक्ति—आत्मा में अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, आदि अनन्त गुण मौजूद हैं।

२८. समयत्व विरुद्धत्व शक्ति—२६ नम्बर की तरह आत्मा कितनी बातों में समान धर्म वाला है, कितनी बातों में असमान धर्म वाला है।

२९. तत्व शक्ति—आत्मा स्वभाव परिणमन में निज, आत्मरस का पान करता है, (उस समय कर्म-बन्धन नहीं होता)।

३०. अतत्व शक्ति—संसारी आत्मा विभाव परिणमन रूप होकर परद्रव्यों का कर्त्ता और स्वामी बन

जाता है (हर समय कर्मबंध होता रहता है)।

३१. एकत्व शक्ति—नित्यनिगोद से सिद्धालय तक अनेक पर्यायों में गमन करती हुई आत्मा ज्ञान-दर्शन जानने देखने की अपेक्षा एक रूप ही रहती है जैसे सोने के आभूषणों में सोना द्रव्य एक ही रूप रहता है।

३२. अनेकत्व शक्ति—आत्मा अनन्तचतुष्टय गुणधारी एक सा गुण रखते हुये भी संसार की अनेक पर्यायों में भ्रमण कर सकता है।

३३. भावशक्ति—भूत अवस्था का वर्तमान अवस्था में अभाव जैसे जवानी अवस्था में बाल अवस्था का अभाव।

३४. अभावशक्ति—एक द्रव्य के अनन्त चतुष्टय में सर्व द्रव्यों के अनन्त चतुष्टय का अभाव।

३५. अभावशक्ति—वर्तमान पर्याय में होने वाली पर्याय का अभाव जैसे यौवन अवस्था में वृद्ध अवस्था का अभाव।

३६. भवत्शक्ति—वर्तमान पर्याय में स्थित रहना।

३७. अभावशक्ति—एक द्रव्य की पर्याय का दूसरे द्रव्य की पर्याय में अभाव, जैसे अग्नि की शक्ति का जल में अभाव।

३८. भावशक्ति—व्याकरण के कारकों के अनुसार क्रियाशक्ति।

३६. क्रिया शक्ति—कारकों के अनुसार आगामी होने वाली क्रिया शक्ति।

४०. कर्तृत्व शक्ति—ससारी आत्मा ज्ञान चेतना में लीन होकर कर्मबन्धन को काट करके मोक्ष जा सकता है।

४१. कर्तृत्व शक्ति—आगामी पर्याय में कर्म काटकर मोक्ष जाने की शक्ति, जैसे श्रेणिक राजा कर्म काटकर मोक्ष चला जायगा।

४२. करण शक्ति—क्षपक श्रेणी मांढकर कम काटकर मोक्ष जाने की शक्ति।

४३. सम्प्रदान शक्ति—निज आत्मरस पान करने की शक्ति।

४४. आपादान शक्ति—पर्याय अपेक्षा उत्पाद व्यय होते हुवे भी निज आत्म द्रव्य ज्यों का त्यों बना रहने की शक्ति।

४५. अधिकरण शक्ति—निज आत्म द्रव्य में अनन्त दर्शन आदि अनन्त गुण धारण करने की शक्ति।

४६. सम्बन्ध शक्ति—अपने निज गुणों की स्वामित्व शक्ति।

नोट—इत्यादि आत्मा में अनन्त गुण विराजमान है यह कुछ गुण भव्य जीवों को ज्ञान कराने के

लिये वर्णन किये गये हैं, विशेष रसपान करने के लिये १०८ श्री कुन्दकुन्द स्वामी कृत समयसारजी को देखिये।

चर्चा नं० १५८ सम्यक्त्व उत्पन्न होने के कारण

		स्थान	कारण
सम्यक्त्व उत्पन्न होने के कारण	(क)	१. अढाई द्वीप की तीस भोग भूमि व कर्म भूमि के तिर्यंच।	१. जाति स्मरण २. देवों का उपदेश
		२ पहले दूसरे तीसरे नरक के नारकी जीव।	,,
	(ख)	१. अढाईद्वीप में तीस भोग भूमियाँ जीव(मनुष्य)	१. जाति स्मरण २. देवों का उपदेश ३. चारण मुनियों का उपदेश।
	(ग)	नवग्रैवेक	१ जाति स्मरण २ देवों का उपदेश ३. प्रतिमाजी का दर्शन
	(घ)	१. अढाई द्वीप के कर्म भूमियाँ मनुष्य तथा तिर्यंच।	१. जाति स्मरण २. देवों का उपदेश

२. भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी १६ स्वर्ग वाले देव	३. चारण मुनियों का उपदेश। ४. प्रतिमाजी के दर्शन ५ मुनि साधर्मी भाई केवली महाराज के निकट रहने का निमित्त।
(ङ) नव अणुदिश विमान और पंच पंचोत्तर विमान वासी अहमिन्द्र।	वहाँ सम्यग्दृष्टि ही उत्पन्न होते हैं।

चर्चा नं० १५६ फुटकर विषय

देव आयु पहले गुण स्थान में प्रारम्भ होता है सातवें में पूर्ण का बंध होजाता है। अगले गुण स्थानों में किसी भी आयु

(१) बंध नहीं होता।

असैनीकी उत्कृष्ट आयु कोड़ पूर्व को हो सकती है।

आयु (२)

जुगलियों की पर्याप्त अवस्था में पीत, पद्म और शुक्ल तीन शुभ लेश्यायें (३) लेश्या ही होती हैं।

श्वांसोश्वास लौकिक में श्वास बाहर निकलने से गिनती शुरू

(४) होती है। परन्तु आगम में श्वांस अन्दर खेंचने से गिनती शुरू होती है।

मनःपर्यय ज्ञान (५)	अवधिज्ञान हुवे बिना भी मनः पर्यय ज्ञान हो सकता है।
तीन स्थानों में से एक समय में एक स्थान की ही उत्पत्ति (६)	मन पर्यय ज्ञान बिना भी अवधिज्ञान हो सकता है। मनःपर्यय ज्ञान, परिहार विशुद्धि, संयम, आहारकद्विक इन तीनों में से एक समय में एक की ही उत्पत्ति हो सकती है परन्तु उत्पत्ति के बाद दो या तीन अवस्थायें साथ रह सकती हैं।
द्रव्यलेश्या (७)	(क) विग्रहगति में सर्व जीवों के शुक्ल लेश्या होती है।
	(ख) अपर्याप्त अवस्था में सर्व जीवों के काप त लेश्या होती है, परन्तु यहाँ वह अपर्याप्त अवस्था है जो आहार पर्याप्ति के बाद में और शरीर पर्याप्ति से पहले होती है।
	(ग) पर्याप्त अवस्था में नाना जीवों की अपेक्षा छहों लेश्या होती हैं, ये कथन द्रव्य लेश्या की अपेक्षा से लिखा गया है।
	नोट—शरीर के रंग को द्रव्य लेश्या कहते हैं।
अवधिज्ञान (८)	(क) तीर्थंकर महाराज, देव तथा नारकीयों के भव प्रत्यय अवधिज्ञान होता है, (तीर्थंकर प्रभु के भव प्रत्यय अवधिज्ञान उपचार रूप से लिखा गया है।
	(ख) तिर्यंच तथा मनुष्यों के गुण प्रत्यय अवधि

ज्ञान होता है, नाभि के ऊपर शंख चक्र आदि कोई उत्तम लक्षण हो उस स्थान से यह ज्ञान प्रगट होता है।

(ग) गुण प्रत्यय ज्ञान के अनुगामी आदि ६ भेद होते हैं।

मुनिचर्या (९)	जहाँ तक श्रावक के गृह के आगे जनसाधारण के लोग जा सकते हैं वहाँ तक मुनि स्वयं चले जाते हैं उससे आगे श्रावक के पढ़गाहने पर ही जाते हैं, ४६ दोष, ३२ अन्तराय, १४ मल दोष आदि सर्व दोष टालकर आहार ग्रहण करते हैं जिसका वर्णन खुलासा ऊपर आ चुका है।
सयम उपकरण (१०)	मुनियों के पास पुस्तक, पीछी, कमण्डलु ये ज्ञान और संयम की वृद्धि के वास्ते होते हैं, इन वस्तुओं को परिग्रह नहीं कहा है।
पीछी के पाच गुण (११)	महाकोमल हो, कम लागत की हो, इसमें पानी प्रवेश नहीं करता हो, तार खुले हुवे हों, मोर स्वय पाँख छोड़ गया हो।
मुनि महाराज के ठहरने के स्थान (१२)	पहाड़ की गुफा, वृक्ष के नीचे, पर्वत का शिखर, नदी का तट, पुराना निर्जनवन, जहाँ ध्यान स्वाध्याय में वृद्धि हो।
मुनि महाराज का नदी प्रवेश (१३)	नदी पार करनी पड़े तो पैर झाड़ कर नदी में प्रवेश करें और नदी उतर कर दोष के

प्रायश्चित में कायोत्सर्ग करें अगर बड़ी नदी हो तो नाव में बैठकर पार होवें, नाव से उतर कर कायोत्सर्ग करें, चाहे श्रावक हो चाहे मुनि हो जिस कार्य में अल्प दोष हों परंतु पुण्य तथा आत्म कल्याण अधिक हो वह काम करना पड़ता है। परन्तु प्रायश्चित अवश्य लेना पड़ता है।

आत्मा के आठ अकम्प प्रदेश (१४)

आत्मा के मध्य में आठ ऐसे प्रदेश हैं, जो हमेशा अकंप रहते हैं, और उनमें योग का अभाव होने से कर्म आश्रव नहीं होता, और उनमें योग के अविभाग प्रतिछेद भी नहीं होते।

प्राशुक जल (१५)

उबाला हुआ जल प्रशुाक है जिसकी मर्यादा आठ पहर अर्थात् २४ घंटे है। गर्म किया हुआ जल भी प्राशुक है, जिसकी मर्यादा ४ पहर अर्थात् १२ घंटे है, लोंग आदि से प्राशुक किये जल की मर्यादा ६ घटे है और छाने हुए जल की मर्यादा ४८ मिनट है। कारणवशात् धूप आदि में गर्म किया अथवा रेहट का (टकराया हुआ) जल भी प्राशुक माना गया है।

स्वर्ग के इन्द्र की सामर्थ्य का वर्णन (१५)

जम्बू द्वीप को पलट सकता है।

सर्वार्थ सिद्धि के अहमिंद्रो की सामर्थ्य १६	तीन लोक को उठा सकते हैं।
	नोट—परन्तु मंद कषाय के कारण ऐसे भाव कभी नहीं उपजते।
तीर्थंकर महाराज और ऋद्धिधारी मुनि (१७)	सर्वार्थ सिद्धि के अहमिन्द्रो से अनन्त गुणी बल शक्ति।
	नोट—परन्तु मंद कषाय के कारण ऐसे भाव ही नहीं उपजते।
ग्यारहवें गुणस्थान की जघन्य स्थिति (१८)	एक समय। (नोट) ग्यारहवें गुणस्थान में चढ़ते ही मरण का समय आ जाये तो एक समय मात्र में ४ गुणस्थान आ जाते हैं।
मतिज्ञान श्रुतज्ञान भेद (१६)	मतिज्ञान श्रुतज्ञान के असख्यात असख्यात लोक प्रमाण समान भेद हैं और इतने ही इन भेदो को ढकने वाले मतिज्ञानावर्ण और श्रुतज्ञानावर्ण यह भेद हैं।
केवल दर्शन और केवलज्ञान के भेद	जितने अविभाग प्रतिच्छेद केवलज्ञान के हैं, उतने ही केवल दर्शन के हैं।
द्रव्य योग (२०)	(क) ससारी जीवों के आत्म प्रदेशो के साथ एक क्षेत्र अवगाही कार्माण वर्गणाओं का मन

वचन काय के निमित्त मिलने से चंचल होना द्रव्ययोग कहलाता है।

(ख) तीव्र चंचलताको अविभाग प्रतिछेद कहते हैं।

(ग) मन्द चंचलता को स्थोक प्रतिछेद कहते हैं।

(घ) द्रव्यों के आकाश प्रदेश में गमन करने को द्रव्य योग नहीं कहते, अगर आकाश में द्रव्यों के गमन करने को द्रव्य योग कहा जाय तो कर्मों से छूटी हुई आत्मा जो एक समय में सात राजू गमन करके सिद्ध शिला में पहुँच गई है उसको भी द्रव्य योग मानना पड़ेगा।

(ङ) कार्माण वर्गणाओ के निमित्त से आत्मप्रदेशों का चंचल होना भाव योग कहलाता है।

मांस में निगोदिया जीव (२१) — मांस में चाहे वह कच्चा हो, अग्नि पर पक रहा हो, अग्नि से पक चुका हो, हर हालत में हर समय निगोदिया जीव जन्म लेते रहते हैं, उसके छूने में भी पाप लगता है, खाने में तो महा पाप है ही।

युगलिया जीवों की गति (२२) — (क) सम्यग्दृष्टि युगलिया जीव शरीर छोड़कर पहले दूसरे स्वर्ग में ही जन्म लेते हैं।

(ख) मिथ्यादृष्टि युगलिया शरीर छोड़कर भवनवासी व्यंतर और ज्योतिषी देवों में ही जन्म लेते हैं।

चार अनुयोगों का विशेष दृष्टिकोण (२३)
(क) प्रथमानुयोग में अलंकार की मुख्यता है।
(ख) चरणानुयोग में नीति और कर्तव्य की मुख्यता है।
(ग) करणानुयोग में गणित और लोक रचना की मुख्यता है।
(घ) द्रव्यानुयोग में तर्क की मुख्यता है।

कषायों के अभावों का वर्णन करने के दृष्टिकोण (२४)
(क) चरणानुयोग में छठे गुणस्थानवर्त्ती मुनि को भी साधारण कषाय से रहित कह दिया जाता है।
(ख) परन्तु करुणानुयोग की दृष्टि में ग्यारहवें गुणस्थान तक कषाय सत्ता में मौजूद रहती है।

नोट—(क) चरणानुयोग में स्थूल कषाय के मन्द होने की तरतमता है।
(ख) करणानुयोग में घातिया कर्म नष्ट करके केवलज्ञान प्राप्त करने की तरतमता है।

दूध की मर्यादा (२५)
दुहने के बाद दूध में दो घड़ी (४८ मिनट) के पीछे त्रसजीव उत्पन्न हो जाते हैं, सो वह दूध अभक्ष्य होजाता है पीने योग्य नहीं रहता।

विदल का स्वरूप (२६)
कच्चे दूध की छाछ या दही के साथ दो दाल होने वाले अन्न और जीभ की राल मिल जाने से सम्मूर्च्छन जीव उत्पन्न हो जाते हैं, उस अवस्था में खाने से पाप लगता है।

अथाना का स्वरूप(२७) लोणी घी (कच्चा मक्खन) कांजी, राई पड़ी हुई छाछ, रात्रि बीतने के बाद बासी भोजन में त्रस जीव और निगोदिया जीव उत्पन्न हो जाते हैं इसको अथाना अवस्था कहते हैं ऊपर लिखी वस्तुएं अभक्ष्य हैं खाने योग्य नहीं।

आटे (चून)की मर्यादा (२८) सर्दी में ७ दिन, गर्मी में ५ दिन बरसात में ३ दिन के बाद त्रस जीव और निगोदिया जीव उत्पन्न हो जाते हैं वह आटा अभक्ष्य हो जाता है खाने योग्य नहीं रहता।

विषय सेवन में पाप (२९) एक दफा स्त्री संसर्ग करने से संख्यात त्रस जीव व अनन्त निगोदिया जीवों का घात हो जाता है जैसे तिलों से भरी हुई नाल में लोहे का गर्म गज डालने से सर्व तिल जल जाते हैं, इसलिए जहाँ तक बने स्त्री भोगका त्याग करना चाहिये।

सम्मूर्च्छन मनुष्यों के उत्पत्ति स्थान अवगाहना और आयु (३०)

(क) १ स्त्री के योनि, २ कांख, ३ नाभि, ४ आंचलों के नीचे का स्थान, ५ मल, ६ मूत्र तथा मुर्दा शरीर में समय २ असख्यात सम्मूर्च्छन मनुष्य उत्पन्न होते रहते हैं।

(ख) सम्मूर्च्छनजीवों की अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग है।

(ग) सम्मूर्च्छन जीवों की आयु एक स्वास के अठारहवें भाग है।

थोड़ी आयु वाले त्रस जीव (३१)

शरीर के ६ मल द्वारों में बहने वाले मलों में, मोरियों में, तर जमीन में, अपवित्र गन्दे स्थानों में उत्पन्न होने वाले दो इन्द्रिय, आदि जीवों की आयु बहुत थोड़ी होती है।

(३२) स्याही में निगोदियाजीव

रात बासी स्याही में असख्यात निगोदियाजीव उत्पन्न हो जाते हैं।

तरतमता रूप अनंत गुणा २ अधिक २ पाप (३३)

(क) किसी भी जीवकी हिंसा करनेमें मन्द कषाय वाले जीवों की हिंसा करने से तीव्र कषायवान जीवों के हिंसा करने में अनत गुणा अधिक पाप लगता है।

(ख) तीव्र कषाय वाले जीवो के हिंसक भाव से मिथ्याभावों में अनंत गुणा पापाश्रव होता है।

नोट—अव्रत्त सम्यग्दृष्टि व्रत न पालता हुआ भी बारहवें स्वर्ग जा सकता है, परन्तु अत्यन्त मन्द कषायवान मिथ्याभावी, परमहस साधु घोर तप करने पर भी बारहवें स्वर्ग से आगे नहीं जा सकता।

सिद्ध महाराज की अवगाहना (३४)

(क) सबसे ऊँची ५२५ धनुष, सबसे नीची ७ हाथ, मध्य के अनेक भेद (ख) सिद्ध महाराज खड्गासन या पद्मासनसे ही मोक्ष जाते हैं, परन्तु उपसर्ग केवलियों के अनेक आकार हो सकते हैं।

* प्रथम खण्ड समाप्त *